पंजाब गवर्नमेण्ट द्वारा पुरस्कृत। पंजाब और देहली यूनिवर्सिटी, राजपूताना
बोर्ड अजमेर की हिन्दीरत्न, इण्टर एंट्रेन्स आदि परीक्षाओं में स्वीकृत

मोतीमाला का छठा रत्न

दाहर

अथवा

सिन्ध-पतन

(दुखान्त नाटक)

नाटककार

श्री उदयशंकर भट्ट

मोतीलाल बनारसीदास
संस्कृत तथा हिन्दी पुस्तक विक्रेता
सैदमिट्ठा बाज़ार, लाहौर।

सन् १९३७ मूल्य १)

प्रकाशक—
सुन्दरलाल जैन
पंजाब संस्कृत पुस्तकालय,
सैदमिट्ठा, लाहौर।

तृतीय संस्करण

मुद्रक—
शान्तिलाल जैन
मुम्बई संस्कृत प्रेस,
सैदमिट्ठा बाज़ार, लाहौर।

अपने पाठक से—

इतिहास पर्वतों के अङ्क से निकलने वाली सरिता के सहचारी पत्थरों के समान है, जो एक ही स्थान से बहते हुए भिन्न भिन्न आकार के होकर अपनी कथाएँ दिखाए, मौनभाव से कर्म विलास के रहस्य को पढ़ रहे हैं। एक ही विश्व प्रवाह में, एक ही प्रकृति के प्रान्तर में, जन्म से लेकर एक ही मरणान्त कथा में यह कर्म वैचित्र्य अपने चातुर्य का परिचय दे रहा है। *विधाता का विधान, प्रकृति का नाट्य, माया की भव्य विभूति सब में* एक ही विचार काम कर रहा है। इस वैचित्र्य में व्यष्टिवाद के समान समष्टिवाद की सत्ता है। एक व्यक्ति का उत्थान और पतन जिस प्रकार समाज पर अपना प्रभाव छोड़ जाता है उसी प्रकार समाज का विकास और उसका नाश भी इतिहास का एक 'पैराग्राफ' है। यदि एक दूसरे से सम्बद्ध है तो दूसरा तीसरे से और तीसरा चौथे से। इसी प्रकार काल की तीव्रगामिनी सरिता में व्यक्तित्व का, समाज का, देश का और संसार का प्रतिबिम्ब दिखाई पड़ रहा है। वैचित्र्य ही संसार का प्रकरण है।

जो दो जातियाँ एक ही दिशा से चलीं, एक ही प्रकार के वातावरण में पलीं, वे भी अन्त में भिन्न परिणाम वाली दिखाई देती हैं। भारत के महिमान्वित गुर्जर और राष्ट्रकूट उसी गति से चले जिस गति से योरोप के फ्रेंच और जर्मन। किन्तु दोनों में आकाश पाताल का अन्तर पड़ गया। उन गुर्जर और राष्ट्रकूटों का आज पता तक नहीं, परन्तु इसके विरुद्ध फ्रेंच और

जर्मन अभी तक जीवित जागृत जातियाँ हैं। सातवीं आठवीं सदी में अरब लोगों के आक्रमण से जिस प्रकार सिन्ध का अध पतन हुआ, ठीक उसी प्रकार ईसाइयों के गढ़ कुस्तुन्तुनिया पर तुर्कों का आक्रमण हुआ। सिन्ध आज तक भी अपनी रक्षा करने में समर्थ न हुआ, किन्तु योरोप ने तुर्कों से बदला ले लिया। इस घटना में कितना साम्य है और कितना वैषम्य ?

परन्तु इतना तो मानना ही पड़ेगा कि देश, काल और अवस्था के भेद से योरोप का व्यक्तित्व सिन्ध के व्यक्तित्व से भिन्न था। यदि एक जाति देश प्रिय थी तो दूसरी आलस्य प्रिय, रूढ़ि प्रिय। यदि एक का समाज सगठित था तो दूसरी का असगठित, उच्छृङ्खल, आडम्बर पूर्ण। भारत के हिन्दुत्व-नाश का कारण इतिहासज्ञ चाहे जो कहें, मुझे तो इनका विवेचनाशून्य अध्यात्मवाद ही मालूम होता है। इसी स्वार्थपूर्ण परलोकवाद ने हिन्दू और बौद्धों के जातीय अंगों में यक्ष्मा का रूप धारण कर उन्हें किसी काम का न छोड़ा। हमारी जातीयता में धर्म वाद की निकम्मी, थोथी रूढ़ियों ने हमें विवेक से गिरा दिया, मनुष्यत्व से खींचकर दासता, भ्रातृविद्रोह, विवेकशून्यता के गढ़े में लेजाकर पीस दिया।

आज जिस नाटक को लेकर मैं हिन्दी ससार के सम्मुख उपस्थित हो रहा हू उसमें भी इसी प्रकार का इतिवृत्त है, यही गाथा है। इसमें यदि एक ओर वीरता है तो उसी के अक में छिपा हुआ पशुत्व अपना

अकाण्डताण्डव दिखा रहा है। यदि एक जगह देश प्रेम का उत्कट आदर्श है तो उसी के दाएँ बाँए, नीचे ऊपर, छल, कपट और नीच वासना रूप साँपनी अपनी विषाक्त जीभ लपलपाए देश प्रेम को चाट डालना चाहती है। अपनी अपनी ढफली और अपना अपना राग है। उस समय भारत की क्या अवस्था थी, लोगों में कितनी आपाधापी थी, कितनी मूर्खता थी, कितना स्वार्थ था, कितना द्वेष था। प्रजा का राजा पर अविश्वास था, राजा लोग प्रजा को पीस डालना चाहते थे। आलस्य, अविवेक, अकिंचनता किस प्रकार अपने विनाशक मद से साधारण जन समाज को, साधुओं को अस्तित्व हीनता का पाठ पढ़ा रही थी !!

हमने सदा ही धर्म से प्रेम करना सीखा है। धर्म की रक्षा के लिये हिन्दुओं ने जितना त्याग किया है, उतना और वैसा त्याग शायद आज संसार की किसी जाति ने न किया होगा। परन्तु हमारे मस्तिष्क में धर्म के द्वारा देश प्रेम की भावना शायद् कभी उठी ही नहीं ऐसा मेरा विश्वास है। हमें अध्यात्मवादी धर्म के अतिरिक्त लोकधर्म की, जातीयता की किसी ग्रन्थ में सर्वोपरि शिक्षा दी गई है, ऐसा विश्वास करने को सहज ज्ञान गवाही नहीं देता। आत्मा और परमात्मा के सिंहासन से हम कभी नीचे नहीं उतरे। हमने सदा ही प्रत्यक्ष का अपलाप किया है, सदा ही वास्तविकता से दूर रहने की चेष्टा की है। जिन दो चार महापुरुषों ने अपने अमूल्य आत्मबलिदान के द्वारा हममें देश प्रेम की भावना पैदा की, हमने (साधारण जन समूह ने) उसका सदा तिरस्कार किया। आज हमारे प्राचीन साहित्य में ऐसे कितने ग्रन्थ हैं, जिनसे समाज ने

स्वतन्त्रता के चरमोत्कर्ष को समझा। हमारा साहित्य या तो आनन्द और पल्लवित कला का साहित्य है या फिर कोरा रूढ़िवादी।

इस नाटक में भी पाठक को उसी रूढ़िवाद, उसी कल्पनावाद, उसी भाववाद की झलक दिखाई देगी। बौद्धों और हिन्दुओं का गौतमीय वाक्‌चार (छल) इसमें प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देगा।

राजनीति की दृष्टि से सिन्धनाश में अरबों का रत्ती भर भी दोष नहीं है। और न कोई व्यक्ति इस मामले में किसी आक्रमणकारी को दोषी ठहरा ही सकता है, कारण कि सम्पत्तिवाद की सदा से प्रधानता रही है। इस दृष्टि से यदि एक देश दूसरे देश पर आक्रमण करता है तो उस में आश्चर्य किस बात का ? आज यदि इस विज्ञान के युग में सम्पत्तिवाद की प्रधानता है तो उस समय सम्पत्तिवाद अपने यौवन काल में था। उस समय सम्पत्तिवाद में धर्म का अंश भी मिला हुआ था। जहाँ आक्रान्ता मुसलमानों में सम्पत्ति की इच्छा थी, वहाँ उनमें अन्धविश्वास भी अधिक था। मुसलमानों के विजयी और जीवित रहने का कारण उनकी जातीयता है, धर्म बढ़ाने की उत्कट भावना भी। इसी ने मुसलमानों को आज भी जीवित रक्खा है, अन्यथा आक्रमण के क्रीडाक्षेत्र भारत में अब से पहले सभी जातियाँ हिन्दू बन गईं। जिस जाति की रगों में अपने देश और अपने समाज के प्रति अटूट श्रद्धा भरी हुई हो, वह जाति कभी दूसरी जातियों से नहीं मिल सकती। वह जाति कभी विजित जातियों के दृष्टिकोण को अपना नहीं बना सकती। उसके जीवन में तत्कालीन हिन्दुत्व ने च्यवनप्राश का काम दिया। इन्हीं सब बातों का दिग्दर्शन कराने के लिये

यहाँ पर सिन्ध की इतिहास सामग्री देना भी अनुपयुक्त न होगा। बात यह है सिन्ध का इतिहास कुछ खास विशेषज्ञों की पुस्तकों के अतिरिक्त आज बहुत कम लोगों को ज्ञात है। आज कल विद्यार्थियों को पढ़ाई जानेवाली पुस्तकों में तो सिन्ध का इतिहास बहुत कम तथा नाममात्र को है।

सक्षिप्त इतिहास—ईसा की छठीं शताब्दी में सिन्ध में देवाजी के वशजों में साहसीराय नाम के अन्तिम राजा हुए। इनकी राजधानी सिन्धु नद के पूर्वीय किनारे पर थी उसका नाम था अलोर *। इसे आज कल 'रोढी' कहते हैं। साहसीराय बौद्ध किन्तु ब्राह्मण राजा थे। इनके प्रधान मन्त्री का नाम था चच। यह बड़ा बुद्धिमान् और नीतिकुशल मन्त्री था। इसके मन्त्रित्व में साहसीराय ने बग़दाद के खलीफ़ाओं को कई बार पराजित किया। साहसीराय की मृत्यु के बाद चच ने राजगद्दी पर अपना अधिकार कर लिया। जिन लोगों ने इसका विरोध किया उन्हें इसने खूब दबाया। न मालूम किस कारण से इसने वहाँ की पुरानी जाति, लोहानों, जाटों और गूजरों को पदच्युत करके इन्हें नीचे गिरा दिया। सेना में उनका कोई अधिकार न रहने दिया। सभा में उनके बैठने का कोई अधिकार न रह गया। घर के बाहर उन्हें नगे सिर, नगे पावों चलने की आज्ञा

---

* कनिङ्घम साहब ने अलोर के सम्बन्ध में खोज करते हुए लिखा है कि अलोर इसका पुराना नाम नहीं था। उन्होंने 'रोर' शब्द से अलोर की कल्पना की है वस्तुत अलोर नाम है पुराना। अलक्षेन्द्र के आक्रमण के समय भी स्ट्रैबो तथा एरायन नामक भूगोल पण्डितों ने इसका नाम 'अलोर' ही बताया है।

दी गई। लकड़ी ढोना भर उनका काम था । इस प्रकार क्षत्रियों की सत्ता से गिरा कर उन्हें पूरी तरह समाज च्युत तथा पद च्युत कर दिया गया। कदाचित् इसका कारण यही होगा कि इन लोगों ने स्वर्गीय साहसीराय की गद्दी पर चच को बैठने देने में विघ्न खड़ा किया हो। इसके बाद उसने साहसीराय की विधवा रानी से शादी भी कर ली । इसी वीर चच ने लगभग चालीस साल तक राज्य किया। इसके समय में भी अरबियों के आक्रमण हुए किन्तु उनकी एक न चली । चच ने बड़ी वीरता से शत्रु के दाँत खट्टे कर दिये।

६३७ में चच की मृत्यु हो गई। चच के बाद उसका भाई चन्द्र गद्दी पर बैठा। इसने लगभग सात साल तक राज्य किया। यह बौद्ध विचारों का था। चीनी यात्री ह्वेनसांग ने इसका वर्णन किया है। इसके बाद ६४४ में दाहर ने राजगद्दी सँभाली । दाहर बड़ा प्रतापी, वीर और यशस्वी राजा था। चचनामे में, जो अरबियों के आक्रमण और उनकी बहादुरी में लिखा गया है, दाहर को सब जगह ' काफ़िर ' लिखा गया है। किन्तु इसकी वीरता की प्रशंसा भी स्थान स्थान पर की गई है। दाहर के ही राज्यकाल में ७१२ में मुहम्मदबिनक़ासिम का सिन्ध पर भयंकर हमला हुआ। जिसमें सिन्ध विध्वंस हो गया।

क़ासिम ने दाहर की दोनों लड़कियों, सूर्यदेवी और परमालदेवी को बगदाद के खलीफ़ा के पास भेज दिया। वहाँ उन दोनों की मृत्यु हो गई। इधर सम्पूर्ण सिन्ध पर मुसलमानों का प्रभाव जम गया । दाहर के लड़के जयशाह ने सिन्ध पर पूर्ववत् अधिकार करने के लिये बहुत युद्ध

हाथ पर पीटे किन्तु इसे कहीं से सहायता न मिली। मौर्दों ने समय पर धोखा दिया। यही इस कथा का अन्त है।

नाटक की कला—

कला इतना सूक्ष्मतत्व है कि मोटे तौर पर उसकी कोई परिभाषा हो ही नहीं सकती। यह अनुभूति का विषय है, प्रत्यक्ष या अनुमान का नहीं। किसी विशेष प्रकार के कौशल की निरन्तर साधना करते रहने पर जब उसके अंग उपांगों की विशेषता या सौन्दर्य की ओर हृदय आकृष्ट होने लगता है तब उस वस्तु के सर्वांग व्यापी सौन्दर्य को 'कला' के नाम से पुकारा जाता है। उस समय हृदय की उथल पुथल में मानसिक विचार-वीथी में वह कौशल एक दृश्यमान सी निश्चित सीमा बना बैठता है किन्तु होती वह इतनी सूक्ष्म है कि उसका कोई लक्षण नहीं किया जा सकता। अव्याप्ति एवं अतिव्याप्ति दोष फिर भी उसे घेरे ही रहते हैं। नाट्यकला का भी यही हाल है। हृदय की वर्गीभूत चेतनाओं का, मानवीय राग द्वेष के द्वन्द्वों का, आशा और निराशा का, भावुकता और क्रूरता का, सुख और दुःख का, प्रतिचित्रण और ऐसे विचार की अवतारणा जिस कला के द्वारा हो, कदाचित् उसे 'नाट्यकला' के नाम से पुकारा जा सकता है। वैसे तो कला असीम है, अननुमेय है और अतर्क्य है। इसीलिये उससे सम्बद्ध नाट्यकला भी असीम है, अननुमेय है और अतर्क्य है। जैसे सुख की प्राप्ति एवं सुखान्त अभिलाषा नाट्यकला की एक सीमा है, वैसे ही अनन्त चिन्ता, वियोग, वेदना और विषाद की वज्रकीलित रेखा भी उसकी एक

परिभाषा है। अर्वाचीन युग के कतिपय नाट्यकारों ने अपूर्णता, कथा के एक अंग को भी नाट्यकला में अभीष्ट स्थान दिया है।

जब विश्व में घिरी हुई बादलों की घटाएँ झंझावेग से झमक कर धरा की अभिलाषा को पूर्ण किये बिना ही दूसरी दिशा को चली जाती हैं, जब अकाल में ही कलियों की मृत्यु हो जाती है, जब आशा के मन्दिर में विहार करने वाले यात्री को अपने दिल पर पत्थर रख कर, अभिलाषाओं का खून कर के, उन्हें अधूरा छोड़ कर अनन्त की ओर लौट पड़ना होता है, तब अपूर्णता नाट्यकला का अंग क्यों नहीं बन सकती? अपूर्णता भी कला है। यहाँ टीसों और और आहों के आकाश में हसरतों और अभिलाषाओं के मेघ झूलते हैं, अतृप्ति की बिजली कड़कती है और अपूर्णता का अभिनय होता है। कदाचित् इसी प्रकार की अपूर्णता को लेकर योरोप के कुछ नाट्यकारों की कला प्रादुर्भूत हुई है।

फलतः कला के इन अंगों पर मैं अधिक न कह कर इतना ही कहूँगा कि प्रत्येक चरित्रचित्रण में, स्वाभाविकता का त्याग न करते हुए नाटकीय कलाओं का आविर्भाव होता है। वस्तु, पात्र, घटना कथोपकथनादि में नाटकीय कला सन्निहित रहती है। स्वागत और आकाश भाषित नाटक के आवश्यक अङ्ग नहीं हैं। सूत्रधार और नान्दी, विष्कम्भक और पूर्वरंग भी चौदहवीं सदी की तरह एक ही दृश्य में समाप्त हो गये हैं।

वस्तुतः प्रकरण की अपेक्षा नाटक कठिन है। नाटक में ऐतिहासिक तथ्य का सम्मिश्रण रहता है। इतिहास वस्तु नाटक की जान है यद्यपि

कई नाटककारों ने ऐतिहासिक अन्तिम तथ्य की रक्षा करते हुए उसके प्रकारों की अवहेलना भी कर डाली है और ऐसा होना स्वाभाविक भी है। कल्पना के क्षेत्र में इतिहास काँटे की तरह चुभता है। जहाँ कहीं उसे निकाल कर फेंक देना पड़ता है वहाँ केवल कला की रक्षा के लिये।

मैंने इस नाटक में ऐतिहासिक तथ्य की पूर्णत रक्षा की है ऐसा दावा तो मैं नहीं कर सकता। उसका कारण एकमात्र यही है कि किसी भी इतिहास में फल के साधनों का, पूर्वरूपों का, विस्तृत विवेचन नहीं होता। नाटककार को वस्तु का आधार लेकर कल्पना की कूँची से नाटक रूप चित्र में उत्थान और पतन के रंग भरने पड़ते हैं। ऐसा ही मैंने भी किया है।

मुझे विक्रमादित्य नाटक के बाद वियोगान्त नाटक की वस्तु के लिये सिन्ध का इतिहास बहुत ही आकर्षक प्रतीत हुआ। जिस समय मैंने सूर्यदेवी की प्रतिहिंसा अग्नि में कासिम को जलते देखा, उस समय मुझे भारतीय स्त्रियों में चमकती हुई यही सान्ध्यलालिमा दिखाई दी। यदि आज भारतवर्ष की नारियाँ सूर्यदेवी की कथा को जान पातीं तो आये दिन के अपलाप से अपना रक्षा कर सकतीं। उनमें हिन्दू जाति, हिन्दुस्तान के लिये वास्तविक अभिमान होता।

यह वियोगान्त नाटक है। हिन्दी साहित्य में वियोगान्त नाटक लिखने का कदाचित् मेरा यह प्रथम प्रयास है। मुझे मालूम है कि संस्कृत साहित्य में संयोगान्त नाटक लिखने की प्रथा रही है। यहाँ तक

कि उत्तररामचरित की कथा वस्तु को तोड़ मरोड़ कर भवभूति ने उसे सयोगान्त बना डाला।

इसका कारण कदाचित् भारतीय दर्शनों का पुनर्जन्म सिद्धान्त और सुखप्राप्ति ही है। दुख में आनन्द की भावना का विचार हिन्दुओं को कभी अपनी ओर खींच सका। 'दुख से मुक्ति' ही इनका सिद्धान्त रहा है। तदनुसार लौकिक विश्वासों में भी यहाँ की दर्शकमण्डली उसी आस्था के अनुकूल वियोगान्त नाटक की कल्पना करने में असमर्थ सी रही है। इधर पाश्चात्य साहित्य में दोनों ही प्रकार के नाटक लिखे गये। योरोप में सयोगान्त नाटक दर्शकों को इतने आकृष्ट न कर सके जितने वियोगान्त नाटक। इसके अलावा वियोगान्त नाटकों की रचना भी कुछ सयोगान्त नाटकों से अच्छी हुई। शेक्सपीयर के वियोगान्त नाटक ही सब से सुन्दर और अच्छे माने जाते हैं। इस कोटि के नाटकों का प्रभाव दर्शकों पर देर तक रहता है। पात्रों की विवशता उन्हें अपनी ओर खींचे रहती है। नाट्यकला का जो वास्तविक तत्व है वह वियोगान्त नाटकों में ही प्रतिफलित होता है। सयोग की कल्पना तथा उसका सुख ससीम है उसमें अनुभूति को बहुत हाथ पैर नहीं मारने पड़ते, परन्तु वियोग की अनुभूति मनुष्य को तन्मय बना देती है। किसी ने ठीक ही कहा है—

सगमविरहविकल्पे वरमिहविरहोनसगमस्तस्य (नाटकस्य)
सगे तत्त तवैक त्रिभुवनमपि तन्मय विरहे। (परिवर्तित)

शायद यही वजह है कि पश्चिमीय साहित्य में वियोगान्त नाटकों का बहुत ऊँचा स्थान है।

वियोगान्त नाटकों की रचना न होने पर भी संस्कृत और हिन्दी साहित्य में विप्रलम्भ शृंगार का वर्णन इस बात का सब से बड़ा प्रमाण है कि वियोगान्तवस्तु का प्रभाव चिरस्थायी एवं शाश्वत होता है।

मुझे इस नाटक की ऐतिहासिक सामग्री तैयार करने में सनातनधर्म कालेज, लाहौर के इतिहासाध्यापक प्रोफेसर गुलशनराय बी. ए. एल एल. बी महोदय से अधिक सहायता मिली है एतदर्थ मैं हृदय से उनका आभारी हूँ।

शिवनिवास,
लाहौर।
२५ दिसम्बर, १९३३

उदयशङ्कर भट्ट

पात्र सूची

दाहर	सिन्ध का नृपति
जयशाह	दाहर का पुत्र
वत्सराज	शिवस्थान का सामन्त
खलीफा	बगदाद का नृपति
हैजाज़	खलीफा का वज़ीर
ज्ञानबुद्ध	देवल का सूबेदार
भानू	देवल का सेनापति (पूर्व डाकू)
सिलवन	बौद्धभिक्षु सागरदत्त (पूर्व डाकू)
रसिल	मोक्षवासव का भाई, बेन का सेनापति
मोक्षवासव	बेन का सामन्त
अब्दुल्ला	खलीफ़ा का प्रथम सेनापति
मुहम्मदबिनकासिम	खलीफा का द्वितीय सेनापति
मुहम्मद हारून	मकरान का सूबेदार
सुपाकर	दाहर का मन्त्री
साधारण पात्र	देवकी, मधुआ, कंचुकी, सशयचन्द्र।

स्त्री पात्र

लाड़ी	दाहर की रानी
सूर्यदेवी	दाहर की कन्या
परमाल	दूसरी कन्या

पहला अंक

पहला दृश्य

स्थान—देवल का राजपथ।

(दो डाकुओं का प्रवेश)

मानू—(खुशी से रुपयों की पोटली उछालता हुआ) हाहा हाहा, तलवार की नोंक पर शत्रुओं को उछालकर नाचते हुए मुझे कितना सुख मिलता है, आग की चिनगारियों में उड़कर चट चट करते मांस के टुकड़ों का शृङ्गार करने में मुझे कितना आनन्द मिलता है, भोलामुख, हँसते हुए और ठण्डी साँस लिये सोते हुए बच्चों को बर्छी के ऊपर उछालकर सनसनाती हुई तलवार से खट खट करके दो टुकड़े करने में तो मानों मेरी चिर इच्छाएँ बल्लियों उछल पड़ती हैं। वाह, कैसा आनन्द आया।

सिलवन—बहुत उछला पड़ता है रे, जानता है मैंने भी तो फन फन करके कटने के दर्द से डकराती और आहों की

धूम्रमाला में विहार करती हुई शत्रु स्त्रियों के आँसुओं की एक एक बूँद से मानो असत्य संपत्ति पाई है। और पिछली लड़ाई में उन अरवियों को खट खट करके काटते हुए मानो मेरे हाथों में हनुमान का बल आगया था।

मानू—मूर्ख कहीं का, शत्रु के शरीर की एक एक किर्च जब मेरी किर्च से नहाई तब उस हाहाकार में मेरा हृदय आनन्द का अट्टहास कर रहा था। (तलवार घुमाकर) अरी, तू अभी प्यासी है? फँसने दे कोई और शिकार, तेरी प्यास बुझा दूँगा। (घूमता है)

सिलबन—पर भाई, साफ बात तो यह है कि मेरा जी अब डाकू के काम से उचट सा गया है। मैं कहने को तो सब कुछ करता ही हूँ, पर जैसे कोई मुझे भीतर ही भीतर टोंच रहा हो। क्या किया जाय, पर अब मुझसे यह न होगा।

मानू—पुख्ता, जैसे कोई भीतर ही भीतर टोंच रहा हो। क्या खूब, मानो मैं तुम्हारा गला घोटकर माल मता छीन रहा होऊँ, क्यों न?

सिलबन—(डाँटकर) तुझे हँसी सूझी है। तू अभी जवान है, जब खलड़ी ढीली होगी, ताक़त खोती हुई नजर आवेगी, साहस सहमता दीखेगा, तब तुझे ये मेरी बातें सूझेंगी। चाहे जो कुछ हो मुझसे यह सब न होगा।

मानू—यह और भी रही। क्या डाकू कभी कमज़ोर भी होते हैं! अरे सिलवन, डाकुओं के जीवन में बहादुरी कूट कूट कर भरी हुई है। हिम्मत के सहारे ये आसमान उधेड़ सकते हैं, लोहे के फटघरों को दाँतों से चबा सकते हैं। और तो मैं कुछ जानता नहीं, दस बीस आदमियों से तो मेरी अकेली तलवार ही खिलवाड़ कर सकती है। यह न समझना कि हम कोई रुपयों के पीछे लोगों को लूटते हैं। नहीं, आग में कूदकर उसके अँगारों से खेलना जो पसन्द करता है, विपत्ति से लोहा ले सकता है, मौत से अठखेलियाँ कर सकता है, वही असली डाकू है।

(एक आदमी का आना)

आगन्तुक—अरे मानू, ओ मानू, चल सरदार बुलाते हैं।

मानू—चुप, गधा कहीं का, मानू का भी कोई सरदार है? वह तो स्वयं सरदार है। अहह, सिलवन, डाकू का भी कोई सरदार होता है? हा हा हा!

सिलवन—(अनसुनी करके) मैं अब तक भूला ही रहा। हाय, हजारों हत्याएँ कीं, बकरी और भेड़ की तरह मनुष्यों का खून बहाया! हाय, मेरे ऊपर कितना पाप लदा हुआ है!

मानू—उन धूर्त, म्लेच्छ व्यापारियों को तो देखो। हमारे

धूम्रमाला में विहार करती हुई शत्रु स्त्रियों के आँसुओं की एक एक बूँद से मानो असंख्य सम्पत्ति पाई है। और पिछली लड़ाई में उन अरबियों को खट खट करके काटते हुए मानो मेरे हाथों में हनुमान का बल आगया था।

मानू—मूर्ख कहीं का, शत्रु के शरीर की एक एक किर्च जब मेरी किर्च से नहाई तब उस हाहाकार में मेरा हृदय आनन्द का अट्टहास कर रहा था। (तलवार घुमाकर) अरी, तू अभी प्यासी है? फॅंसने दे कोई और शिकार, तेरी प्यास बुझा दूँगा। (घूमता है)

सिलवन—पर भाई, साफ बात तो यह है कि मेरा जी अब डाकू के काम से उचट सा गया है। मैं कहने को तो सब कुछ करता ही हूँ, पर जैसे कोई मुझे भीतर ही भीतर टोंच रहा हो। क्या किया जाय, पर अब मुझसे यह न होगा।

मानू—घुघरा, जैसे कोई भीतर ही भीतर टोंच रहा हो। क्या खूब, मानो मैं तुम्हारा गला घोटकर माल मता छीन रहा होऊँ, क्यों न?

सिलवन—(डाँटकर) तुझे हँसी सूझी है। तू अभी जवान है, जब खलड़ी ढीली होगी, ताकत सोती हुई नज़र आवेगी, साहस सहमता दीखेगा, तब तुझे ये मेरी बातें सूझेंगी। चाहे जो कुछ हो मुझसे यह सब न होगा।

मानू—यह और भी रही। क्या डाकू कभी कमज़ोर भी होते हैं! अरे सिलवन, डाकुओं के जीवन में बहादुरी कूट कूट कर भरी हुई है। हिम्मत के सहारे ये आसमान उधेड़ सकते हैं, लोहे के कटघरों को दाँतों से चबा सकते हैं। और तो मैं कुछ जानता नहीं, दस बीस आदमियों से तो मेरी अकेली तलवार ही खिलवाड़ कर सकती है। यह न समझना कि हम कोई रुपयों के पीछे लोगों को लूटते हैं। नहीं, आग में कूदकर उसके अँगारों से खेलना जो पसन्द करता है, विपत्ति से लोहा ले सकता है, मौत से अठखेलियाँ कर सकता है, वही असली डाकू है।

(एक आदमी का आना)

आगन्तुक—अरे मानू, ओ मानू, चल सरदार बुलाते हैं।

मानू—चुप, गधा कहीं का, मानू का भी कोई सरदार है? वह तो स्वयं सरदार है। अहह, सिलवन, डाकू का भी कोई सरदार होता है? हा हा हा!

सिलवन—(अनसुनी करके) मैं अब तक भूला ही रहा। हाय, हज़ारों हत्याएँ कीं, बकरी और भेड़ की तरह मनुष्यों का खून बहाया! हाय, मेरे ऊपर कितना पाप लदा हुआ है!

मानू—उन धूर्त, म्लेच्छ व्यापारियों को तो देखो। हमारे

ऊपर ही जबरदस्ती। हमारी बहू बेटियों को ही बहकाने का यत्न, जल में रहकर मगर से वैर, हमसे ही आदर पाकर हमारे देश में यह अनाचार? (क्रोध से दाँत पीसकर) हमने भी उसका भरपूर बदला लिया। धूर्त, दुष्टों को अपनी कृतघ्नता का पूरा पूरा प्रायश्चित्त करना पड़ा। शत्रुओं के खून से उनके जहाज को रँग दिया। वह तो कहो कि सरदार ने उनमें से कुछ को ठोड़ी रगड़ कर क्षमा माँगने पर केवल कैद भर कर लिया, नहीं तो एक एक आदमी से एक एक दुर्व्यवहार का पूरा बदला लिया जाता। किन्तु नहीं, म इन यवनों से पूरा बदला लूँगा।

आगन्तुक—अरे मानू, चल, सरदार बुला रहे हैं।

मानू—अच्छा चल, (जाता हुआ) मुझे ये सरदारी फरदारी ठीक नहीं जँचती। डाकू का कोई स्वामी नहीं हो सकता। यह उग्रता का अवतार, वीरता का शृंगार और क्रूरता का उद्गार है। देखो न, आज कैसा मजा आया। बहुत दिनों की प्यास बुझ गई (खड़ा होकर उस आदमी से) जा, मैं नहीं जाता।

आगन्तुक—अरे इतना अभिमान, सरदार बुलावें और तू न चले। अच्छा ठहर—(मानू को पकड़ता है दोनों ओर से तलवारें खिच जाती हैं लड़ाई होने लगती है। सरदार का प्रवेश)

सरदार—मानू यह क्या ? (दोनों अलग हो जाते हैं)

आगन्तुक—आपके बुलाने पर भी यह नहीं आ रहा था सरदार !

सरदार—समझ गया। मैं जानता हूँ यह बड़ा वीर है और ढीठ भी।

मानू—डाकुओं का कोई सरदार नहीं होता। मानू आज से किसी को अपना सरदार नहीं मान सकता।

सरदार—(प्रसन्न होकर) ठीक है ऐसे ही लोग डाकूपने की रक्षा कर सकते हैं। किन्तु मानू, बिना नेता के कभी सफलता नहीं मिल सकती। दस्युओं की भी एक वृत्ति है, उनका भी एक समाज है और उसके भी कुछ नियम हैं, उन नियमों को पालने से डाकूपन की रक्षा हो सकती है। मैं जानता हूँ तुम वीर हो, किन्तु वृत्ति की रक्षा के लिये एक न एक मुखिया की आवश्यकता तो है ? नेता

मानू—साफ बात तो यह है कि जबसे तुमने राजा दाहर की अधीनता स्वीकार की है तब से मेरे शरीर में असख्यों बिच्छुओं के काटने की सी पीडा हो रही है। हम लोग डाकू हैं। हमारे लिये राजसमाज, राजनियम नहीं हैं।

सरदार—तुम नहीं जानते कि हमने अधीनता क्यों स्वीकार की ? हमारा छोटा सा टापू है। महाराज दाहर के पिता महाराज चच ने हमारी लूटपाट से ऊब कर एक बार

इस टापू पर हमला किया। मेरे पिता के हार जाने पर भी प्रसन्न हो महाराज ने यह टापू हमें देकर प्रतिज्ञा करा ली कि हम लोग सिन्ध पर कभी हमला न करेंगे। आज उसी के अनुसार हम लोग सिन्ध की किसी प्रजा पर अत्याचार नहीं करते। हाँ, अरब सागर में जो जहाज़ जाते आते हैं उन्हीं को लूटना हमारा काम है। उस सन्धि के अनुसार महाराज दाहर हमारे किसी बाहरी शत्रु को लूट लेने पर भी हमारी रक्षा करने को बाध्य हैं। यही कारण है कि कई बार अरबियों के जंगी बेड़े, जो हमारे ऊपर आक्रमण करने आये समुद्र में डुबा दिये गये। आज जिन शत्रुओं को उनकी दुष्टता का दण्ड देते हुए हमने लूटा है, उनसे प्राप्त सामग्री को लेकर महाराज की सेवा में सूचना देने के लिय तुम्हें जाना होगा। मानू, तुम इस काम के लिये तैयार हो न?

मानू—समझा, सब समझ गया। एक डाकू को बड़े डाकू के पास जाना होगा।

सरदार—चुप, महाराज को डाकू कहते हो?

मानू—सरदार, राजगद्दी पर बैठनेवाले सभी लोग डाकू हैं। उनमें और हममें सिर्फ इतना ही फ़र्क़ है कि उन्होंने डाका डाल कर अपना राज बना लिया है और हमने नहीं। जब एक राजा किसी देश पर हमला करता

हैं तो उसका काम है पहले राजा के लोगों को मार कर अपना रोब जमाना, उन्हें कुचल कर अपने आदमियों को इकट्ठा करना और खजाना, सेना आदि हथिया लेना; क्या यह डाका नहीं है?

सरदार—होगा, हमें इन बातों से कोई सम्बन्ध नहीं। किन्तु मानू, तुम क्या जानो, महाराज दाहर कितने प्रजा रक्षक, ज्ञानी और वीर हैं? उनके राज्य में शेर और बकरी एक घाट पानी पीते हैं। जाओ, (थैली देते हुए) यह थैली भेंट करते हुए हमारी तरफ से महाराज को प्रणाम करना। आज के अरबियों की लूट का सब हाल सुना देना। (दौड़ते हुए एक आदमी का आना)।

आगन्तुक—सरदार, गज़ब हो शत्रु अपना जहाज़ लेकर रात को भाग गये! उन्होंने सिपाहियों को बहका कर अपना रास्ता निकाल लिया!

सरदार—है, यह बुरा हुआ? मानू, यह बात भी महाराज से कह देना, यह तो बुरा हुआ! (सब इसी सोच में खड़े रहते हैं)

पटपरिवर्तन

दूसरा दृश्य

(महाराज दाहर प्रासादोद्यान में मन्त्री के साथ बैठे हैं)

दाहर—कहीं सत्यरूप से स्पष्ट, कहीं असत्यरूप से अस्थिर, कहीं कोमलाङ्गिनी वीरांगना के समान छल से भरी, समय के उलटफेर में, हिंसा की उग्रता में, दयालुता के आँचल में, स्वार्थ की गोद में, उदारता की ओट में, धन रत्न के प्रलोभन में राजनीति सदा अपनी साधना में जुटी रहती है। यह दूतों की आँखों से न्याय के कान से, निश्चय के मुख से, सन्देहभरे सकल्प से सब का निर्णय करती है। विघ्नों से इसकी शक्ति घटती है। उग्रता इसका रूप है, साहस भुजाएँ और षड्यन्त्र गति। अहा, राज्य शासन भी कितना भयकर है। विधाता के विधान की तरह इसका रहस्य से भरा व्यापार है। मुझे ही देखो, सब की इच्छा पूरी करने पर, प्रजा को प्राणों से अधिक पालने पर भी कौन कह सकता है कि प्रजा मुझसे पूरी तरह सन्तुष्ट ही होगी! न्याय की कठोरता से झुलसकर कुछ लोग अपने आप ही राज्य के विरुद्ध हो जाते हैं, क्यों मन्त्रिन् ठीक है न?

चपाकर—महाराज, सत्य है। वस्तुत सब लोगों को प्रसन्न किया ही नहीं जा सकता और उस समय तो और भी, जब छोटे छोटे राजाओं का राज्य हो। महाराज, सुना है वेन का सामन्त मोहवासव भीतर ही भीतर महाराज से द्वेष रखता है?

दाहर—क्यों, मोहवासव हम से द्वेष क्यों रखता है?

चपाकर—नाथ, मैं केवल इतना ही जानता हूँ कि समान विभूति के लोग डाह के वश में होकर अपनी हीनता को आत्मदर्प के दर्पण में देखते ही व्याकुल हो उठते हैं। यही कुछ कारण होगा और क्या? आपकी दया का अनुचित लाभ उठाकर उसने कौरवों का अनुकरण किया है।

दाहर—इसका क्या कारण हो सकता है?

चपाकर—आपका वैभव, उसके ऊपर आपकी कृपा और स्नेह।

दाहर—कुछ और भी?

चपाकर—नाथ, दूतों से सुना है कि वह वेन राज्य को स्वतन्त्र करना चाहता है।

दाहर—हमने पिछले वर्ष अतिवृष्टि के कारण उससे कर भी तो नहीं लिया था?

चपाकर—नाथ, अपराध क्षमा हो। आपकी नम्रता, दया से ही वह इतना उद्धत हो गया है। सिंह की दाढ़ों में असावधानी से लग जानेवाला कीड़ा भी उससे नहीं डरता। सूर्य का प्रकाश, जो सब को आनन्द देता है, उल्लू और कुमुद को नहीं सुहाता। चन्द्रमा अपनी शीतल किरणों से संसार को प्रसन्न करता है, परन्तु कमल को अच्छा नहीं लगता। काँटा उपेक्षा करके बाहर फेंक देने पर भी अवसर आते ही पैर में चुभ ही जाता है, यही उसका स्वभाव है।

दाहर—हाँ ठीक है, प्रेम से पाला गया व्याघ्र भी तो हाथ चाटता हुआ रुधिर पीने के लिये स्वामी पर आक्रमण कर ही बैठता है। इसका उपाय—

(प्रतिहारी का प्रवेश)

प्रतिहारी—जय हो पृथ्वीनाथ, देवल के टापू का एक आदमी प्रार्थना के लिये बाहर खड़ा है।

दाहर—देवल के टापू का आदमी? क्यों चपाकर, किस लिये आया होगा?

चपाकर—कोई लूटपाट की बात होगी।

दाहर—(प्रतिहारी से) आने दे। (प्रतिहारी का प्रस्थान और मानू का प्रवेश)

मानू—(राजवैभव देखकर) अहा, अब समझा, राजा

और डाकू में जीवन की दिशा का अन्तर है, उद्देश दोनों का एक है। (सामने जाकर) जय हो महाराज की!

दाहर—(रंग ढंग से उस व्यक्ति को देखकर) तू कौन है? यहाँ कैसे आया? आँखें फाड़ फाड़ कर क्या देख रहा है?

मानू—महाराज, मैं यह देखता हूँ कि एक डाकू और राजा में क्या अन्तर है?

दाहर—(आश्चर्य से) क्या अन्तर है?

चपाकर—(उस आदमी की ढिठाई पर क्रोधित होकर) मूर्ख, राजदरबार के नियमों का पालन कर।

मानू—अत्याचार के पर्वत पर रखे हुए सोने के सिंहासन पर राजा बैठता है और खून की कीचड़ से सूखी हुई सिल पर डाकू।

दाहर—अरे निठल्ले, क्या तुझे राजा का इतना ही कर्तव्य मालूम हुआ?

मानू—और भी होगा, पर मैं तो इतना ही जान पाया हूँ महाराज!

दाहर—तू बड़ा निडर है। बता, किस लिये आया है?

मानू—(थैली सामने रख कर) महाराज, सरदार ने यह थैली भेंट करते हुए कहा है कि अरबियों के जहाज़

चपाकर—नाथ, अपराध क्षमा हो। आपकी नम्रता, या से ही वह इतना उद्धत हो गया है। सिंह की दाढ़ों में असावधानी से लग जानेवाला कीड़ा भी उससे नहीं रता। सूर्य का प्रकाश, जो सब को आनन्द देता है, उल्लू और कुमुद को नहीं सुहाता। चन्द्रमा अपनी शीतल किरणों संसार को प्रसन्न करता है, परन्तु कमल को अच्छा हीं लगता। काँटा उपेक्षा करके बाहर फेंक देने पर ी अवसर आते ही पैर में चुभ ही जाता है, यही उसका वभाव है।

दाहर—हाँ ठीक है, प्रेम से पाला गया व्याघ्र भी तो हाथ ाटता हुआ रुधिर पीने के लिये स्वामी पर आक्रमण कर ा बैठता है। इसका उपाय—

(प्रतिहारी का प्रवेश)

प्रतिहारी—जय हो पृथ्वीनाथ, देवल के टापू का एक आदमी प्रार्थना के लिये बाहर खड़ा है।

दाहर—देवल के टापू का आदमी? क्यों चपाकर, किस लिये आया होगा?

चपाकर—कोई लूटपाट की बात होगी।

दाहर—(प्रतिहारी से) आने दे। (प्रतिहारी का प्रस्थान और ानू का प्रवेश)

मानू—(राजवैभव देखकर) अहा, अब समझा, राजा

दाँत गड़ाये बैठे हैं। किन्तु स्वर्गीय महाराजाओं के सामने उन्हें सदा मुँह की खानी पड़ी। महाराज, मुझे डर है कि कहीं इस बहाने वे फिर आक्रमण न कर बैठें!

दाहर—आर्य लोग युद्ध से कभी नहीं डरते। युद्ध तो उनकी घुटी का रस है। जो कडुआ होते हुए भी अन्त में लाभदायक है। एक नहीं हजार बार अरबी लोग आयें। दाहर युद्ध से मुख न मोड़ेगा। (क्रोध से) उन दुष्टों का इतना साहस कि अधीनस्थ टापू की स्त्रियों और बालकों को भगा कर ले जॉय? (सोच कर) अच्छा हुआ, सरदार ने कोई भूल नहीं की। यदि इस से अधिक दण्ड दिया जाता तो मैं अधिक प्रसन्न होता, चपाकर!

चपाकर—दीनबन्धु, दुष्टों को दण्ड देना ठीक है, यह उचित ही हुआ। किन्तु आजकल घरेलू झगड़ों में सिन्ध सब से बढ़ा हुआ है। आकाश में रहनवाले मेघ ही यदि सूर्य को ढक लें तो पृथ्वी उसकी गरमी से कैसे तप सकेगी? महाराज, इस समय बौद्ध, लोहान, जाट और गूजरों की अवस्था बहुत गिरी हुई है। कहा नहीं जा सकता, यदि युद्ध हुआ—

दाहर—मन्त्रिन्, तुम्हारा विचार ठीक है। यदि कीड़ा पुष्प को खा डाले तो आँधी का झोंका उसे कैसे सँभालेगा?

का कुछ सामान है।

दाहर—अरबियों का जहाज़ ?

चपाकर-अरबियों को फिर लूटा ? सरदार ने बड़ी भूल की।

मानू—महाराज, अरबियों का एक जहाज आँधी से बचने के लिये हमारे बन्दरगाह पर आकर ठहरा। उसने हमारी स्त्रियों को पकड़ कर जहाज के द्वारा भगा ले जाना चाहा। इस प्रकार कई स्त्रियों और बालकों को पकड़ भी लिया। इस धूर्तता का समाचार जब भाग कर आये हुए एक बालक से सरदार को मालूम हुआ तो अपने योधाओं के साथ हमने जहाज़ घेर लिया। सरदार के द्वारा बालक और स्त्रियों को लौटाने का आग्रह करने पर उन दुष्टों ने हमें युद्ध के लिए ललकारा। इस पर घोर युद्ध हुआ। सरदार ने उन कपटी व्यापारियों को लूट लिया। लड़ाई में पचासों आदमी मारे गये। स्त्रियाँ हमने छीन लीं। उनको बन्दी बना डाला। बस, यही समाचार है। परन्तु उनमें से कुछ लोग भाग गये।

चपाकर—महाराज, अनर्थ हुआ चाहता है!

दाहर—हूँ! अनर्थ क्यों ? दुष्टों को दण्ड देना क्या अनर्थ है ? (मानू से) यह ले जाओ, हमने सब कुछ जान लिया। (मानू सिर झुकाकर जाता है)।

चपाकर—देव, स्वर्गीय महाराज साहसी राय और महाराज चच के समय से ये अरबी लोग हमारे देश पर

में शान्ति है, धर्म में शान्ति है, शान्ति के मूल स्तम्भों पर इसका निर्माण हुआ है। यहाँ तक कि यह शान्तरूप भगवान् बुद्ध से सजीवन पाकर भी संसार में राजधर्म का नाशक सिद्ध हो रहा है। प्राचीन काल में जब बाहरी शत्रुओं का भय न था, बौद्धधर्म भारत के लिये कितना ही हितकर क्यों न हो, किन्तु इस समय तो यह केवल आडम्बर मात्र ही रह गया है। इसके अतिरिक्त हमारा यह प्रान्त अरब की नाक पर है। ऐसी दशा में कब क्या हो जाय यह कहा नहीं जा सकता। दुर्भाग्य ने बौद्धों को अपनाकर ही शान्ति लाभ नहीं की, उसने हिन्दुओं के चमकते हुए भाग्याकाश में ऊँच नीच के वर्ण भेद का काला मेघ उभार कर अविवेक का अन्धकार भी फैला दिया। स्वर्गीय पिता, तुम्हारे इस प्रमाद का फल मुझे भोगना पड़ेगा। सिन्ध में जो वीर जातियाँ थीं, उन्हें ऊँच नीच के भावों ने मसल कर नष्ट कर डाला। हाय, वे लोहान, जाट और गूजर जो हमारे राज्य की शोभा, वीरता की मूर्ति थे, आज ऊँच नीच के विचारों से पददलित हो रहे हैं। वीरता, शूरता, दृढ़ता, धीरज का अब उनमें नाम ही रह गया है। आज राजनियमानुसार वे लोग रेशमी वस्त्र नहीं पहन सकते, ज़ीन कसे घोड़े पर नहीं बैठ सकते, पैरों में जूते नहीं पहन सकते, सिर पर पगड़ी नहीं बाँध सकते, पहचान के लिये

क्षपाकर—नीति के अनुसार मोक्षवासव को अधीन करना चाहिये।

दाहर—नीति के अनुसार साम से और आवश्यकता पड़ने पर दमन से भी। मैं रसिल के द्वारा उसके भाई पर नजर रखूँगा। वह योधा है, आज्ञाकारी है। आज ही पत्र द्वारा रसिल को इधर बुलाना होगा।

क्षपाकर—अच्छा हो यदि वेन का सेनापति भी रसिल को बनाया जाय?

दाहर—ठीक है, इस पर भी विचार किया जायगा। जाओ।

(क्षपाकर जाता है)

दाहर—वृक्ष को नाश करने के लिए अग्नि की अपेक्षा जल का प्रवाह अधिक उग्र होता है। अत साम नीति भी उपेक्षा करने योग्य नहीं है। (कुछ ठहर कर) हमारे देश की परिस्थिति भी बड़ी विचित्र है। सारे प्रान्त में बौद्धधर्म ने अपना अधिकार जमा रखा है। हिन्दुत्व तो नाममात्र को रह गया है। सारा प्रदेश विहारों, भिक्षुकों और मठाधीशों से भरा है। कर्मचारियों में भी प्राय सभी बौद्ध हैं। देखो न, देवल का सूबेदार ज्ञानबुद्ध बौद्ध ही है। बुद्धमत परमार्थ और शान्ति का धर्म हो सकता है पर उसमें राजनीति नहीं है। इसके वातावरण में शान्ति है, विचारों

में शान्ति है, धर्म में शान्ति है, शान्ति के मूल स्तम्भों पर इसका निर्माण हुआ है। यहाँ तक कि यह शान्तरूप भगवान् बुद्ध से सजीवन पाकर भी संसार में राजधर्म का नाशक सिद्ध हो रहा है। प्राचीन काल में जब बाहरी शत्रुओं का भय न था, बौद्धधर्म भारत के लिये कितना ही हितकर क्यों न हो, किन्तु इस समय तो यह केवल आडम्बर मात्र ही रह गया है। इसके अतिरिक्त हमारा यह प्रान्त अरब की नाक पर है। ऐसी दशा में कब क्या हो जाय यह कहा नहीं जा सकता। दुर्भाग्य ने बौद्धों को अपनाकर ही शान्ति लाभ नहीं की, उसने हिन्दुओं के चमकते हुए भाग्याकाश में ऊँच नीच के वर्ण भेद का काला मेघ उभार कर अविवेक का अन्धकार भी फैला दिया। स्वर्गीय पिता, तुम्हारे इस प्रमाद का फल मुझे भोगना पड़ेगा। सिन्ध में जो वीर जातियाँ थीं, उन्हें ऊँच नीच के भावों ने मसल कर नष्ट कर डाला। हाय, वे लोहान, जाट और गूजर जो हमारे राज्य की शोभा, वीरता की मूर्ति थे, आज ऊँच नीच के विचारों से पददलित हो रहे हैं। वीरता, शूरता, दृढ़ता, धीरज का अब उनमें नाम ही रह गया है। आज राजनियमानुसार वे लोग रेशमी वस्त्र नहीं पहन सकते, ज़ीन कसे घोड़े पर नहीं बैठ सकते, पैरों में जूते नहीं पहन सकते, सिर पर पगड़ी नहीं बाँध सकते, पहचान के लिये

कुत्तों के बिना बाहर नहीं निकल सकते। राज्य भर में लकड़ी ढोना भर उनका कार्य रह गया है। (दुख से) विधाता, तुम्हें क्या करना अभीष्ट है? यदि हमारे पाप से अरबियों ने इस देश पर आक्रमण किया तो मैं अपनी छोटी सेना के साथ कैसे उनका सामना कर सकूँगा? हाय! यह बड़ी राजनैतिक भूल हुई! हमने अपने हाथों अपना नाश किया। यदि वे लोहान जाट और गूजर समय पर हमारी सहायता न करें तो इसमें किसका दोष होगा। (इसी ध्यान में ये उद्गार निकलते हैं)—

यह भूल अज्ञता का फल है, जो अवसर के तरु पर फूली।
वह सदा चुभी काँटा बन कर, वे भूलें आजीवन में भूलीं॥
उनकी न विषमता नष्ट हुई, उनकी सत्ता न विलीन हुई।
वे दब दब कर चमका करतीं, वे फल देकर ही क्षीण हुई॥

पटपरिवर्तन

तीसरा दृश्य

(समय —दोपहर)

स्थान—इराक का राजपथः—

एक शराबी उन्मत्त होकर गाता है —

है यह दुनियाँ का सार हृदय का मतवालापन इसमें
इन आँखों का संसार डूबता उतराता है जिसमें
हाँ, पी विभोर मद और नाचती कोयल कूकी बन बन
मधु सुरभि उड़ी इस पार बिछाती जीवन के स्वर्णिल मन
हो सागर मद का भरा, स्वर्ण किरणें हों सुन्दर प्याले
मैं दिनकर बनकर पीऊँ वारुणी घन छायें मतवाले
ये बरसें मदिरा, पवन मद्य के मकरन्दों से तर हो
संसार मद्य बनजाय, भरूँ, पीऊँ, फिर भरूँ अमर हो

(गाता हुआ चलता है और लड़खड़ा कर एक आदमी के ऊपर आ गिरता है फिर उठकर 'है यह दुनियाँ का सार' कहता हुआ गाता है।)

दूसरा—(घूर कर) मियाँ, आँखें खोलकर चलो, हिये की फूट गई हैं क्या ?

शराबी—(अनसुनी करके) है यह दुनियाँ का सा र, हूँ ! तुम कौन ?

दूसरा—दीखता नहीं है ?

शराबी—सब कुछ दीखता है। तुम आदमी की सूरत में गधे हो यह भी । अहा हा!

दूसरा—(एक थप्पड़ जमाकर) अब गधा तू है या मैं ?

शराबी—(उठकर उसका हाथ पकड़ लेता है) फ् फ् या स मझता है ये ऊँट ? सम झ ता नहीं कौन जा रहा है ? (एक थप्पड़ मारकर) अब बता ।

(लड़ते लड़ते दोनों गिर पड़ते हैं, सिपाही आकर पकड़ लेता है)

सिपाही—चलो, तुम दोनों हैजाज़ के पास चलो।

दूसरा—हाँ चलो, इसने मेरे कपड़े फाड़ डाले हैं।

शराबी—(मस्त होकर) है यह दुनियाँ का सार ?

सिपाही—(शराबी को पकड़ कर) गाता है या चलता है ?

(शराबी हाथ छुड़ाकर फिर गाता है। सिपाही एक थप्पड़ जमा देता है।)

सिपाही—चल।

शराबी—(होश में आकर) हाँ चल भाई, पर मैंने क्या किया, बता तो सही। (सिपाही पकड़ कर हैजाज़ की सभा में ले जाता है, शराबी गाता हुआ जाता है) 'है यह दुनियाँ का' ।

पटपरिवर्तन

चौथा दृश्य

(हैजाज की सभा, बगदाद के खलीफ़ा वलीद बैठे हैं)

हैजाज—हे धर्मगुरु, जनाब के शासन भार सँभालते ही सारे राज में चैन की वसी बजने लगी है।

खलीफ़ा—ठीक है। इसी लिये राज का दौरा करता हुआ इधर आ निकला।

(सिपाही और दो आदमियों का प्रवेश)

सिपाही—महाराज, इसने (शराबी की ओर इशारा करके) शराब पीकर नगर में हुल्लड़ मचा रखा है। इसने इस भले आदमी के कपड़े भी फाड़ डाले हैं।

शराबी—कपड़े फाड़ डाले हैं? नहीं महाशय! बिल्कुल झूठ है। भला, मुझ जैसे आदमी से इसके कपड़ों का क्या सम्बन्ध? कपड़े इसने अपने आप फाड़े हैं। मैं निरपराध हूँ।

दूसरा—अरे, इतना झूठ?

शराबी—यानी कितना?

खलीफ़ा—यह ज़रूर शराबी दीखता है। इसके मुँह से शराब

की बू आ रही है। हैजाज, क्या यहाँ शराब पीना मना नहीं किया गया ?

हैजाज—धर्माचार्य, इराक में साल भर में एक उत्सव मदिरापान का भी होता है। इसे 'हश्नगाह' कहते हैं।

खलीफ़ा—नहीं हैजाज़, मैं इस उत्सव को हर तरह बुरा समझता हूँ। शराब मनुष्यता के विरुद्ध, धर्म के विपरीत, आचार के प्रतिकूल है। मैं अपने पूज्य खलीफाओं की तरह इस अपवित्र वस्तु से घृणा करता हूँ।

शराबी—महाराज! हमारे माननीय खलीफाओं ने शराब को बुरा ज़रूर कहा है किन्तु मदिरा अहा, यह क्या कोई छोड़ने की चीज है? जीवन में नया उत्साह, नई उत्तेजना, नवीनता ही तो इसका गुण है। जब स्वर्ग में भी शराब मिलेगी, तब इस दुनियाँ में उसे पीने से ।

खलीफ़ा—चुप रह मूर्ख, (सिपाही से) इसे पकड़ कर लेजा और कैदखाने में डाल दे। इसने बगदाद के खलीफा के सामने ढिठाई की है।

(सिपाही आज्ञा पाते ही उसे ले जाता है, शराबी फिर भी गाता हुआ जाता है और दूर तक 'है यह दुनियाँ का सार' की आवाज़ सुनाई देती है। खलीफ़ा घूर कर देखता रहता है, फिर जोश में आकर)

हैजाज—आज से इराक में इस प्रकार का मेला बिल्कुल बन्द होना चाहिये। मैं अपने राज्य में मदिरा को यों ने बढ़ने

दूँगा। मैं किसी ऐसी वस्तु को, जो मेरे धर्म के विरुद्ध है, बुरी नज़र से देखता हूँ। मैं इस्लाम के विपरीत किसी चीज को संसार में नहीं देखना चाहता। क्या रसूलिल्लाह ने कुरान शरीफ़ के पाँचवें सूरा में शराब के विरुद्ध मुसलमानों को उपदेश नहीं दिया है! खुदा ने साफ कहा है कि "ऐ मुसलमानो, शराब शैतान की बनाई हुई चीज है, इसे छोड़ दो।"

हैजाज—आमीन (सब लोग आमीन कहते हैं।)

(दरबान का प्रवेश)

दरबान—(फर्शी सलाम कर के) धर्मावतार, एक आदमी बाहर खड़ा रो रहा है, कुछ प्रार्थना किया चाहता है।

खलीफ़ा—रो रहा है? क्या मेरे राज्य में रोने वाले भी हैं? बुलाओ।

(दरबान जाता है, वह आदमी आता है)

आदमी—दुहाई है दुहाई, लूट लिया, मार डाला।

खलीफ़ा—क्या बात है, क्यों रोता है?

आदमी—हे धर्माचार्य, मैं लुट गया, मैं बरबाद हो गया, हाय!

हैजाज—बात क्या है? कुछ बता भी तो!

आदमी—श्रीमान्! मैं लंका से कुछ नौमुसलिमों के

साथ इराक़ आ रहा था कि रास्ते में आँधी के कारण देवल के बन्दरगाह के पास हमें ठहरना पड़ा। इसी बीच में दाहर के कुछ लोगों ने हमें लूट लिया। हाय! लंका के राजा ने कुछ भेंट भी जनाब के लिये भेजी थी, वह भी दुश्मनों ने हम से छीन ली। महाराज, (रोकर) उन्होंने हमारे आदमियों को भी हमसे छीन लिया!

खलीफ़ा—(दाँत पीसकर) ऐसा, फिर क्या हुआ?

आदमी—उन लोगों ने हमें कैद कर लिया।

हैजाज—फिर?

आदमी—हम लोग बड़ी कठिनाई से छिप कर भाग आये, हमारी सारी कमाई लुट गई। हायरे! दुहाई है हुजूर।

खलीफ़ा—हैजाज! इतना कुछ हो गया? तोबा! (उस आदमी से) अच्छा तू जा, हम इसका भरपूर बदला लेंगे। खुदा ने क़ुरान शरीफ़ में कहा है कि कान का बदला कान से, नाक का नाक से और दाँतों का बदला दाँतों से लो। मुझे मालूम हुआ है मेरे स्वर्गीय पिता देवल की बन्दरगाह चाहते थे, आज समय है कि उस इच्छा को पूरा करने के लिये अपनी सारी ताकत के साथ उस काफिर के देश पर हमला किया जाय।

हैजाज—हुजूर, हमें इस लड़ाई में कई बार हार

हुई है। दाहर से पहले साहसीराय और चच ने हमें कई बार हराया है।

खलीफ़ा—(और भी खीझकर) वलीद देखेगा कि काफिर इस बार कैसे जीतता है। क्या तुम्हें मालूम नहीं हजरत ने ३१६ आदमियों के बूते पर मदीने के एक हज़ार काफिरों को नष्ट कर डाला था।

एक सभासद—मान्यवर, मुमकिन है यह काम दाहर का न होकर किसी डाकू का हो। लड़ने से पहले दाहर का रंग ढंग भी देख लेना चाहिये।

खलीफ़ा—डाकू का हो या किसी का। मैं सिन्ध को अब यों न छोड़ूँगा। उसकी ईंट से ईंट बजा दूँगा। जो मुल्क मेरे पूज्य खलीफा लेना चाहते थे, वह मैं ज़रूर लूँगा। दुश्मन को नाकों चने चबा दूँगा। मैं मुसलमानों की हार का बदला एक एक आदमी से लूँगा, एक एक शहर से लूँगा और सारे प्रान्त को पीसकर धूल में मिला दूँगा।

हेजाज—जरूर, ज़रूर, इस काम के लिये यदि मुझे देश विदेश की धूल फाँक कर भी सेना इकट्ठी करनी पड़े तो भी मैं करूँगा। लेकिन अलहज़ूरी के कहने के मुताबिक दाहर का गुप्त और प्रत्यक्ष रूप से भेद लेना भी ज़रूरी मालूम होता है, खलीफा साहब !

खलीफा—मैं कुछ नहीं जानता हैजाज़, मैं दाहर का सिर और छत्र चाहता हूँ और चाहता हूँ सम्पूर्ण प्रान्त पर अधिकार। (घुटने टेककर) ऐ खुदा, हम लोग इस काम में तेरी सहायता चाहते हैं। (सब लोग घुटने टेक कर प्रार्थना करते हैं)

पटपरिवर्तन

पाँचवाँ दृश्य

स्थान—अबोर का बन।

(सूर्यदेवी और परमालदेवी का कचुकी के साथ शिकारी वेश में प्रवेश)

सूर्य—इस निर्जन प्रान्त में मृगया की खोज करते हुए जैसे मनुष्य के धीरज की परीक्षा होती है वैसे ही उसकी वीरता भी जागृत होती है, क्यों रे कचुकी?

कचुकी—राजकुमारी, यह कौन जानता है कि कठफोड़ा जब लकड़ी पर चोंच मारता है, तब उसे यह सब पेट के लिये नहीं करना पड़ता?

सूर्य—अरे, फिर तू ने वही बेसिर पैर की हाँकनी शुरू कर दी?

पर—हाँ, यदि इस समय सिंह तुझ पर हमला करे तो तू क्या करे?

कचुकी—अहा, तुम इतना भी नहीं जानती? छोटी राज कुमारी, वृक्ष की उत्पत्ति का फल यही तो है कि मनुष्य उन पर चढ़े। भला, उसकी चोंच घिस न जाती होगी?

सूर्य—किसकी रे? (पीछे मुड़कर) कचुकी, आगे आगे चल

कंचुकी—(पीछे मुड़कर) उसी कठफोड़े की तो। (चलने लगता है)

परमाल—(हँसकर) बहन ने तुझ से कहा कि हमारे आगे चल और तू पीछे मुड़ रहा है।

कंचुकी—तुम अपना मुँह मोड़ लो, मैं आगे हो जाऊँगा। आगे और पीछे का प्रश्न इस गोलाकार पृथ्वी पर हो ही नहीं सकता। ओहो, अब समझा, नाक से बोलनेवाले को मुख और नाक दोनों का सहारा लेना पड़ता है, किन्तु प्रश्न यह है कि वह किस से अधिक बोलता है और किस से कम? यह किसी ने न जाना।

सूर्य—(परमाल के साथ घूमती हुई आगे निकल जाती है, पीछे फिर कर देखती है कि कंचुकी एक वृक्ष की डाल से लटक रहा है) अरे, यह क्या! आता क्यों नहीं?

पर—विचारक जो ठहरा, कोई तरंग आ गई होगी। अरे कंचुकी, ओ कंचुकी!

कंचुकी—इधर आइये राजकुमारी, अब मैंने यह प्रश्न हल कर लिया है, देर तो बहुत लगी!

(सूर्य और परमाल लौटती हैं)

सूर्य—कैसे मूर्ख से पाला पड़ा है, साथ क्यों नहीं आता रे!

पर—क्या हल कर लिया ?

कंचुकी—राजकुमारी, इधर आइये। अहा ! बड़ी विचित्र बात है। जल्दी आइये जल्दी, जल्दी।

(सूर्य और परमाल दोनों उधर जाती हैं)

दोनों—क्या बात है ?

कंचुकी—(गम्भीर मुद्रा से) मैंने यह निश्चय कर लिया कि आम के वृक्ष पर नींबू और नींबू के वृक्ष पर आम क्यों नहीं लगते ?

सूर्य—(खीझ कर) तेरा सिर, इसे साथ ला कर मूर्खता मोल ले ली।

परमाल—हाँ, क्यों नहीं लगते ?

कंचुकी—तो तुम जाओ, मैं भी जाता हूँ। नींबू और आम का प्रश्न—(जाने लगता है)

सूर्य—जा।

पर—बहन, बुला लो न।

(इसी बीच नेपथ्य से सिंह गर्जना के साथ एक आदमी की चीख सुनाई देती है)

सूर्य—हैं ! सिंह ?

पर—किसी आदमी के ऊपर टूट पड़ा है, हाय ! (दोनों

उस ओर दौड़ती हैं। परदा गिरता है और वे देखती हैं कि सिंह यात्री को दबाये बैठा है। इसी समय परमाल और सूर्य तीर से एकदम सिंह को घायल कर देती हैं, वह गिर पड़ता है, दोनों उसको बाँध कर घायल की ओर मुड़ती हैं)

सूर्य—चोट तो नहीं लगी?

पर—अरे, यह तो (घबरा कर) मूर्छित हो गया!

व्यक्ति—(कुछ देर बाद उन दोनों की ओर देखता हुआ) आप कौन हैं? मुझे चोट नहीं लगी। खुदा तुम्हारा ।

सूर्य—(ध्यान से देखकर) घबराओ मत, बताओ तुम कौन हो?

व्यक्ति—(घबराकर) मैं सिन्ध का ही रहने वाला हूँ।

सूर्य—सिन्ध का? (संदेह से) कहाँ जा रहे हो, इधर कहाँ से आ रहे हो, यह थैला कैसा है?

व्यक्ति—(छिपाता हुआ) कुछ नहीं, यों ही।

सूर्य—दिखाओ इसमें क्या है?

पर—यह कोई दूत मालूम होता है।

व्यक्ति—दूत? क्या? मैं मैं दूत? या खुदा, हाय मरा ।

सूर्य—(संवाद का थैला छीनकर) ओहो, यह तो अरबी भाषा में है। कञ्चुकी जानता है। (पीछे फिरकर देखती हैं कि कञ्चुकी वहाँ एक वृक्ष की आड़ में छिपा बैठा है। परमाल जाकर उसके कान पकड़ लेती है।)

कचुकी— (सिंह को अपने ऊपर आया जान) अबे गधे, क्या तू भी आदमी की तरह कान पकड़ता है ? (पीछे फिर कर) राजकुमारी जी, ओह ! मैंने समझा कि ।

पर—तू इसी लिये वृक्ष की जड़ में छिपा बैठा था, क्या यह नहीं सोच रहा था कि डर से वृक्ष की जड़ का क्या सम्बन्ध है ?

कचुकी—वाह खूब कही । मैं यह सोच रहा था कि भय हृदय की वस्तु है या बाहर की ।

पर—क्या निश्चय किया ?

कचुकी—यही कि भय रहने के लिये ससार भर का चक्कर लगाकर मनुष्य के हृदय में जगह कर बैठा है ।

सूर्य—कचुकी, क्या तू अरबी भाषा जानता है ?

कचुकी—जानने का ज्ञान जिसे हो वही जानता है । ज्ञान गुण है वह द्रव्य में रहता है, द्रव्य ससार की सभी वस्तुओं को कहते हैं, इसीलिये सभी सब कुछ जानते हैं ।

सूर्य—(पत्र दिखाकर) क्या तू इसे पढ़ सकता है ?

कचुकी—यह सयुक्त क्रिया है और दो धातुओं से बनी है। एक पढ़ और दूसरी सक । सक से सामर्थ्य की प्रतीति होती है

और पढ़ से पढ़ने की। तुम्हारा किस से आशय है, राजकुमारी?

सूर्य—(खीझ कर) तेरे सिर से, ले इसे पढ़।

पर—(हँसकर) बड़ा ज्ञानी है।

कचुकी—सिर, सिर से ससार की सभी क्रियाओं की उत्पत्ति है। विवेचना शक्तियों का आविष्कार सिर से ही हुआ है। राजकुमारी, इसे पढ़। यह वाक्य सार्वनामिक कर्ता का है। वाक्य की पूरी गति ।

सूर्य—(कान पकड़कर) पढ़ता है या नहीं?

कचुकी—(पत्र हाथ में लेकर) हाँ, बोलिये क्या पढ़ूँ? (देखकर) यह पत्र अलाफी के नाम इराक से आया है।

सूर्य—(ध्यान से) हैं, इराक से? अलाफी के नाम!

(यह आगन्तुक व्यक्ति अपना रहस्य खुलता देख पत्र छीनकर भागने लगता है। सूर्य तीर से उसे घायल कर देती है, वह गिर पड़ता है)

सूर्य—(दौड़कर दो लातें जमाकर) धूर्त कहीं का, (पत्र छीन लेती है) सच बता तू कौन है?

कचुकी—(लात उठाता हुआ) जानता नहीं तू किसके सामने खड़ा है? ओहो! क्या तू इस प्रश्न का उत्तर नहीं दे सकता? नहीं यों न छोड़ूँगा बता तू कौन है? पर याद रख, प्रश्न में अशुद्धि कोई नहीं है, हाँ उत्तर ठीक होना चाहिये।

व्यक्ति—(मार के डर से) राजकुमारी, मारो मत। हाय ! पीड़ा हो रही है। हाय— !

सूर्य—न, मैं तुझे यों ही न छोड़ूँगी। सच बता तू कौन है? (कंचुकी से) ले यह पत्र पढ़ कर सुना।

कंचुकी—(पत्र पढ़ता है) हैजाज ने लिखा है—"अलाफी, यदि तुम राज्य की सहायता करो तो अब्दुल्ला को मार कर यहाँ से भागने और काफिर 'दाहर' की शरण में जाने का तुम्हारा कसूर माफ किया जा सकता है। वह काम यह है कि तुम दाहर के राज्य के उन खास आदमियों का, जो दाहर के खिलाफ हैं, नाम लिख कर भेजो और उनको दाहर के विरुद्ध भड़काओ। हमारी तरफ से लालच देकर उनको मदद के लिये तैयार करो। हमें विश्वास है कि तुम मुसलमानों के विरुद्ध कोई काम न करोगे और जब अरबी लोग सिन्ध पर आक्रमण करें, तब तुम उन्हें हर तरह से सहायता दोगे।"

पर—हैं ! ये चालें ! पर अलाफी तो महाराज का बड़ा विश्वासी आदमी है !

सूर्य—(उस आदमी को बाँध कर) सीधी तरह से हमारे साथ चल, नहीं तो—(तीर चुभाती हुई) यहीं सब काम तमाम कर दूँगी।

चपाकर—(हाथ जोड़ कर) महाराज ! सामन्त सिंह श्री वत्सराज का एक दूत पत्र लेकर आया है, उसमें श्रीमान् से प्रार्थना की गई है कि गूजरों को पूर्ववत् अधिकार दिये जायँ। वे गूजरों की एक सेना बनाया चाहते हैं, जैसी आज्ञा हो।

जयशाह—वत्सराज बड़े दूरदर्शी हैं। महाराज, उन्हें आज्ञा मिलनी ही चाहिये।

पुरोहित—धर्मावतार, क्या नीच जातियों को अधिकार देकर उच्च वर्ण का नाश कर देंगे? महाराज, ऐसा नहीं होना चाहिये।

चपाकर—पुरोहित जी, विश्वास और कर्म दो पृथक् वस्तुएँ हैं। राजनीति में बराबरी का पद देना नृपति का आभूषण है!

(दूत का प्रवेश)

दूत—(हाथ जोड़ कर) दीनानाथ, बगदाद देश के राजा का दूत श्रीमन् के दर्शन किया चाहता है।

दाहर—आने दे, मैं जानता हूँ वह क्यों आया है। (सभा से) वत्सराज की प्रार्थना पर विचार कर के ही उचित उत्तर दिया जाय। सभ्य लोगो, आपका इस सम्बन्ध में क्या विचार है? मैं चाहता हूँ।

(मुसलमान दूत का प्रवेश, सभास्थल के गौरव को देख तथा महाराज के तेज के सामने यवनदूत का मस्तक अपने आप झुक जाता है)

दूत—(सिर झुक जाने पर भी अभिमान मुद्रा दिखाता हुआ) राजा दाहर, मैं माननीय खलीफा साहब के पास से आ रहा हूँ। उन्होंने तुमसे पूछा है कि तुम्हारे कुछ आदमियों ने निरपराध अरबी व्यापारी के जहाज़ को क्यों लूट लिया और उनमें से कुछेक को मार क्यों डाला? इसलिये खलीफा ने तुम पर अपराध लगा कर यह आज्ञा दी है कि तुम अपने अपराधों की क्षमायाचना करते हुए खलीफा साहब को देवल का बन्दरगाह दे दो और अरबी व्यापार का रास्ता खोल दो। नहीं तो सिन्ध की भूमि खून से रँग जायगी। तुम्हें मालूम है फारस, रोम और स्पेन तक हमारा राज्य हो गया है। अब वह दिन दूर नहीं कि खलीफा की हकूमत का डंका सारे हिन्दुस्तान में बजेगा और तुम्हारे जैसे अपने किये का फल पायेंगे।

दाहर—दूत का काम है कि अपने स्वामी के मनोभावों को प्रकट करने में तनिक भी सकोच न करे। हमारे शास्त्र में दूत अवध्य है। इसीलिये हमने तेरी दुष्टताभरी बातें शान्ति से सुनी है। तेरे स्वामी ने हमारे ऊपर दोष लगाया है कि उस निरपराध अरबी व्यापारी को हमने लूटा। क्या तेरे

स्वामी को यह मालूम नहीं कि उस दुष्ट ने हमारी सीमा में आकर हमारे प्रजाजनों, स्त्रियों और बालकों को बहका कर भाग जाने की चेष्टा की। हमारी प्रजा ने जो उस का सत्कार किया, उसका फल हमें यह दिया गया ! फिर तेरा स्वामी देवल का बन्दरगाह किस बूते पर माँग रहा है ? छी ! माँगने से देश नहीं मिलते। इससे पूर्व भी तो तेरे स्वामी और उसके बाप ने अपने बल की अच्छी प्रकार परीक्षा कर ही ली है। फिर किस बूते पर उसे ऐसा दु साहस हुआ ? हम लोग आर्य हैं, हम में क्षत्रियत्व है, एक बग़दादी राजा की तो बात ही क्या, यदि समस्त ससार भी दाहर पर अनुचित दबाव डाल कर उसके देश को छीनने की चेष्टा करेगा तो दाहर उसके दाँत खट्टे कर देगा। वीरत्व की विभूति, क्षात्रियत्व की गरिमा, शौर्य के अवतार आर्य लोग व्यर्थ ही किसी से छेड़छाड़ नहीं करते। यदि हस्तक्षेप द्वारा उन्हें कोई पददलित करना चाहे तो एक बग़दादी राजा क्या, ऐसे सैकड़ों राजा भी दाहर का कुछ नहीं बिगाड़ सकते। जा, उस खलीफा से हमारी सब बातें सुना दे। हमने जान बूझ कर किसी व्यापारी को कष्ट नहीं दिया।

दूत—अच्छी तरह सोच लो। कहीं ऐसा न हो कि एक व्यापारी के बदले तुम्हें सारा सिन्ध

खलीफा को सौंपना पड़े।

जयशाह—(क्रोध से) मूर्ख ! बहुत मत बक, अपने कर्म का पालन कर, अन्यथा तुझे मालूम नहीं कि महाराज का नाम लेते ही तेरा सिर मेरे वीरों की स्त्रियों की महावर का पात्र बन जायगा !

दूत—(सहम कर) तो क्या मुझे यही आज्ञा है ?

दाहर—हाँ, तुझे और तेरे स्वामी दोनों को।

(दूत डरता हुआ विदा होता है)

जयशाह—(क्रोध से काँपते हुए) इन दुष्ट अरबियों ने उल्टा हमें दोषी ठहरा कर लड़ाई के लिये उभारा है, मृत्यु को बुलाने का प्रयास किया है। इस समय आवश्यकता है कि हम सदा के लिये इन अरबियों का नाश कर दें। हे वीर लोगो, मुझे विश्वास है कि सिन्ध के एक एक कण से एक एक वीर उठकर अपने जयनाद से सम्पूर्ण शत्रु मण्डल को कँपा देगा।

सभासद्—अवश्य, अवश्य।

(सूर्य और परमाल देवी का अरबी जासूस के साथ प्रवेश)

सूर्य—महाराज की जय हो, शिकार के लिये घूमते हुए हमने एक अरबी का शिकार किया है। यह आपके सामने है।

दाहर—बेटी, यह कौन है, कहाँ से आया है ?

अलाफी—महाराज, यह तो इराक के वज़ीर का एक सरदार मालूम होता है।

सूर्य—(अलाफ़ी से) हाँ, यह वही है। (अपनी जेब से पत्र निकाल कर) यह पत्र लेकर अलाफी को घूँस देने आया था।

दाहर—(आश्चर्य से) घूँस ! अलाफी यह क्या बात है ?

अलाफी—(घबरा कर) मेरे पास ! मेरे पास क्यों ?

(सभा में पत्र पढ़ा जाता है)

दाहर—क्या अरब का खलीफा बाहुबल से दाहर का सामना नहीं कर सकता ? मनुष्यता से गिरे हुए व्यक्ति छलछिद्र से कार्यसिद्धि की आशा करते हैं। (कुछ सोच कर) अलाफी, तुम्हें ज्ञात है कि खलीफा के अपराधी होकर तुम ने हमारी शरण ली थी !

अलाफ़ी—महाराज, यह क्या भूलने की बात है। अलाफी आपकी कृतज्ञता से कभी उऋण नहीं हो सकता।

दाहर—यदि तुम इस पत्र के द्वारा अपने अपराध क्षमा की सूचना पाकर अरब जाना चाहो तो प्रसन्नतापूर्वक जा सकते हो। आर्यों के शास्त्र में शरणागत को सर्वदा अभयदान लिखा है।

चपाकर—अलाफी, समय बदलता जा रहा है। शत्रु के पक्ष का कोई भी व्यक्ति इस समय क्षम्य नहीं है। यह महाराज की दया है कि जो यह सब जान कर भी तुम्हें अभय दे रहे हैं।

अलाफी—महाराज, तुच्छ अलाफी श्रीमान् की दया के लिए बहुत आभारी है, वह ऐसा बेईमान नहीं है कि मौके पर भाग जाय। जहाँपनाह देखेंगे कि अलाफी अपने पाँच सौ अरबियों के साथ सिन्ध के लिये किस तरह जान लड़ाता है।

सभासद्—सिन्ध नृपति की जय, धन्य हो अलाफी।

दाहर—तुम्हारी इच्छा है। यदि तुम रहना चाहो तो कोई रोक टोक नहीं।

चपाकर—महाराज, अब हमें शत्रु का सामना करने के लिये उद्यत रहना चाहिये।

दाहर—मन्त्रिन्, मैं सतर्क हूँ (जाते हुए) आज फिर देश की रक्षा का प्रश्न है। शत्रु के आने में कोई देर नहीं है। देश के सूय पर युद्ध केतु के समान एक ग्रह है, जिससे उद्धार पाने के लिये मनुष्यों की बलि देनी होगी। परतन्त्रता की हिलोरों से डगमगाती हुई स्वतन्त्रता की नौका को बचाने के लिये योग्य कर्णधारों की आवश्यकता है। मन्त्रिन्, हमें युद्ध के लिये तैयार रहना चाहिये। सेना की भरती प्रारम्भ

हो जाय। युद्ध के सम्बन्ध में फिर विचार करेंगे। इस व्यक्ति को बन्दी करो।

चपाक्र—जो आज्ञा।

दाहर—(सूर्य से) तुम बड़ी वीर लड़की हो। सूर्य, मुझे तुमसे ऐसी ही आशा थी। (उसकी पीठ पर हाथ फेरते हुए जाते हैं, सभा विसर्जित होती है, जासूस को सिपाही बन्दी बना लेते हैं।)

पटाक्षेप

दूसरा अंक

पहला दृश्य

[illegible] (हैजाज़ अपने कमरे में क्रोध से अधीर हो कर दाँत पीसता हुआ टहल रहा है।)

हैजाज—ओह, अब तो सहा नहीं जाता। खलीफा और मेरे प्यासे गले को ठंडा करनेवाले मदिरा के घूँट के समान ये सिन्धी कब तक निश्चेष्ट रह सकते हैं? मद की उत्तेजना को पचा जाना ही उसकी विशेषता है। जिस दिन मैं इस उत्तेजक वारुणी को घूँट घूँट करके पीलूँगा, जिस दिन सिन्ध की वासन्ती सुरभि के उन्मत्त मकरन्दकण मेरे क्रोध की उत्तप्त ऊष्मा से छनछना कर भस्म हो उठेंगे, उस दिन मेरे हृदय में शान्ति की लहरियाँ धीमी किन्तु उत्कटता के अनुपम राग के साथ सुख की क्षीण रेखाएँ दिखला सकेंगी। मेरे ईमान के विरुद्ध सुन्दर काँच के प्यालों में रखी हुई, यह शराब मुझे चैन से न बैठने देगी। इतना दुस्साहस, इतना अभिमान, 'आर्य लोग युद्ध से नहीं डरते'! देखूँगा, यह दाहर कब तक मेरे सामने आनन्द मन्दाकिनी की धारा में निरवच्छिन्न स्नान करता रहेगा। हाँ, अब

विलम्ब किस बात का ? मैंने भी वहतानसलामी के लड़के अब्दुल्ला को देवल पर आक्रमण करने के लिये तैयार कर लिया है । इधर सीरिया की छ हज़ार सेना और चार हजार बगदादी वीर प्रस्तुत हैं । अब्दुल्ला की अपनी सेना है ही । वह मकरान का सूबेदार है । इस बार सिन्ध को पीस न डाला तो बात ही क्या ? हाय, हनफ, रशीद, सिनान और मुज़िर बेचारे इन शत्रुओं के हाथों मारे गये । चच के समय से लेकर अब तक हमें पराजय ही मिली । किन्तु इस बार देखना है, देखूँगा—

(दरबान का प्रवेश)

हैजाज—(सलाम कर के) सेनापति अब्दुल्ला साहब बाहर खड़े हैं ।

हैजाज—ठीक, अच्छे अवसर पर आये, जा बुला ला ।

(दरवान जाता है ।)

हैजाज—इस बार भूकम्प होगा । प्रचण्ड वज्र निर्घोष से सिन्ध सिहर उठेगा । (आकाश की ओर देख कर) देख रहा हूँ, अच्छी तरह देख रहा हूँ । इस युद्ध में मुझे सिन्धी शत्रुओं के शव दृष्टिगोचर हो रहे हैं । दर्द से कराहते, आहें भरते, फूट फूट कर रोते विलखते लोगों को देख रहा हूँ । (दाँत पीस कर) रोओ, भरपूर रोओ । (हँस कर) तुम्हारा यही दण्ड है ।

(दरबान के साथ अब्दुल्ला आता है ।)

हैजाज—आओ मेरे सेनापति, शत्रु के कण्ठ पर कृपाण से क्रीडा करने वाले भाई अब्दुल्ला, सुनाओ कितनी देर है ?

अब्दुल्ला—स्वामी, सब कुछ तैयार है । मकरान, सीरिया और बग़दाद की सेनाएँ तैयार हैं । बस, आज्ञा की देर है ।

हैजाज—(उत्कण्ठा से अब्दुल्ला के गले में हाथ डाल कर) बहुत ठीक । खुदा के नाम पर, अरब के नाम पर, देश की उन्नति के लिये भाई अब्दुल्ला मैं तुम्हें विदा करता हूँ । जाओ । (तलवार देकर बिदा करता है ।)

अब्दुल्ला—(सिर झुका कर) आमीन ।

(दोनों जाते हैं, नेपथ्य में सेना का गगन भेदी घोष सुनाई देता है ।)

पटपरिवर्तन

दूसरा दृश्य

(परमालदेवी प्रासादोद्यान में वीणा लिये गा रही है।)

पर—पड़े हैं छोटे हृदय पटल पर नई सी रंगत दिखा रहे हैं।
पुरानी स्मृतियों के चित्रपट पर नवीनतायें जमा रहे हैं।
विभूतियों की घना के सुन्दर सुहावनी सी विशुद्ध झाँकी—
कुमुद को चंदा की चाँदनी में हँसा हँसा कर लुभा रहे हैं।
ये झिलमिलाती चमक रही हैं तरंगे रँग रंग की अनूठी,
उन्हें उठा के हवा के झोंके थपक थपक कर सुला रहे हैं।
स्वयं जगाकर स्वयं बुझाते स्वयं सुनाकर अतीत गाथा,
हमारी आँखों के सामने यों विचार पर्दे उठा रहे हैं।

(वीणा हाथ से रख कर) हारिल पक्षी लकड़ी पर बैठ कर जैसे उसे छोड़ना नहीं चाहता, उसी तरह संसार ने दुख को पकड़ रक्खा है। दुखों, विपादों की रगड़ से चमकता हुई हृदय की कठोरता स्वार्थ बन कर मनुष्य को नचाती रहती है। जब दो स्वार्थों का आपस में संघर्ष होता है, तब उसकी प्रचण्ड ज्वाला में ह्रस्व स्वार्थ का स्वामी भस्म हो जाता है। यही संसार के विनाश की अन्तर्मुखी घोषणा है। उदारता, परोपकार और प्रेम के डण्ठलों पर निकला हुआ

सन्तोष का कमल उसी स्वार्थ के हिमपात से भस्म हो जाता है। विधाता बड़ा क्रूर है, जिसने विषैली लालसा की भूमि पर विभूति की मृगमरीचिका उत्पन्न कर दी है। उसने धाँय धाय करके जलती हुई आत्मलिप्सा की मशाल देकर मनुष्य के अन्धकार भरे आत्मप्रासाद के लाक्षागृह में विभूतियों की सुन्दरता देखने की भावना पैदा करदी है। देखने में सुन्दर विष के प्यालों में लबालब आशाभरे अमृत का एक बिन्दु टपका दिया है। (कंचुकी का प्रवेश)

कंचुकी—तलवार में चमक का जो उपयोग है वही साँप में मणि का और परोपकार में स्वार्थ का है। पर निबोली देखने में सुन्दर, खाने में मीठी और अन्त में कड़वी है। यही संसार का प्रकार है।

पर—आओ कंचुकी, तुम्हारी बातों में बड़ा आनन्द मिलता है।

कंचुकी—परमात्मा ने मुँह के ऊपर नाक क्यों बनाई जानती हो ?

पर—मनुष्य खाने से पहले उसकी दुर्गन्धि सुगन्धि को जान ले।

कंचुकी—और नाक के ऊपर आँखें ?

पर—उस गन्धमय वस्तु का रूप रंग देख ले।

वह सायिन लहरों से हँस कर हा ! क्रमश वहीं गई निगली
किसने परिणामों में पाया सचित आशा भरा सिंगार
मैं ससार विहारस्थल पर निरख रही यह बारबार

(ध्यानमग्न हो जाती है ।)

पटपरिवर्तन

तीसरा दृश्य

(देवल का सूबेदार नागपुर अपने निजू कमरे में
दो मुसाहिबों के साथ बैठा है)

नाग—यह राजकाज भी कितना वेदक, कितना कठोर, कितना कुरुचिपूर्ण और दायित्व से भरा है। प्रातःकाल से सायंकाल तक, रात से सबेरे तक, चौबीस घण्टे, आठ पहर, उठते बैठते, खाते पीते, राज्य के झंझट ऐसे पीछे पड़े रहते हैं जैसे धूप के पीछे आग। फरियादी की पुकार, रुक्का, पुर्जा, हस्ताक्षर, आज्ञापत्र, यह देख, वह देख के मारे नाक में दम है। लोग कहते हैं-मैं सुखी हूँ, स्वतन्त्र हूँ, कर्ता, धर्ता, विधाता हूँ, पर सच तो यह है कि यह सबसे बड़ी परतन्त्रता और सब से अधिक दुख है। नर्तकियों के नाच में, संगीत के उतार चढ़ाव में, विलासिता के सरूर में जैसे राजकाज मुझे पुकार पुकार कर टोंच सा रहा है। क्यों समुद्र, ठीक है न?

समुद्र—स्वामिन्, बिलकुल ठीक, बावन तोले पाव रत्ती सही है, दीनानाथ! भला जितना काम आप करते हैं क्या किसी और ने भी किया है? कुत्ते की पूँछ की तरह दिन भर हिलते ?

नाग—लाभ क्या, कुछ भी नहीं। कलम की तरह घिसे

जाना, कागज की तरह रँग जाना ही हमारा काम रह गया है ।

महापथ—और आग की तरह जलना, पानी की तरह बहना, मिट्टी की तरह उड़ना, हवा की तरह फैलना क्या कोई अच्छी बात है, महाराज ?

ज्ञान—नहीं, मुझसे इतना काम न होगा । मैं घुन की तरह अब न पिस सकूँगा, महापथ !

समुद्र—नहीं, कभी नहीं । मैं तो जब आपको केवल संकेत से 'हाँ' या 'न' करते देखता हूँ, तब चिन्ता के मारे मेरा मुँह लटकने लगता है । हाय, इतना काम !

महापथ—बुद्ध भगवान् ने कहा है–शान्तिलाभ करो, शील सचय करो, धैर्य रखो । भला उस बैल की पूँछ का क्या फायदा, जो न कभी कुछ खाती है, न विश्राम करती है केवल मक्खियाँ ही उड़ाया करती है ?

समुद्र—महाराज, आप और कार्य, दोनों परस्पर विरुद्ध वस्तुएँ हैं, क्या आप काम करने के लिये उत्पन्न हुए हैं ? नहीं, कभी नहीं ।

महापथ—ठीक है, उस काठ का सन्दूक बनने से क्या लाभ है जो अच्छे अच्छे कपड़ों की रक्षा तो करता है लेकिन उन कपड़ों को स्वयं कभी नहीं पहनता ।

ज्ञान—वाह महापथ, क्या खूब, भई तुम्हारी जय।

समुद्र—श्रीमान्, कलम कहिये !

महापथ—कलम ! मै कलम से कह रहा हूँ क्या ? यार तुमने तो सब।

ज्ञान—गुड गोबर कर दिया !

महापथ—निश्चय ही !

समुद्र—हाँ बात तो यहाँ से चली थी कि हमारे सूबेदार साहब काम बहुत करते है।

महापथ—ऐसे काम से तो निष्काम होजाना अच्छा।

समुद्र—मेरा बस चले तो मै आपको निष्काम बना दूँ ?

महापथ—जब कागज के पन्ने हवा में फुरफुर कर के उड़ते हैं, जब कोमल किसलय पवन पर झूल कर इठलाते हैं, तब क्या वे काम करते ह ?

ज्ञान—काम काज से मनुष्य की आयु घटती है, शरीर निर्बल होजाता है।

समुद्र—हाँ, महाराज, देखते रहने से नज़र कमज़ोर हो जाती है, चलाने से हाथ थक जाते हैं, गाने से ज़बान घिस जाती है। इसीलिये गाय केवल रँभा कर जबान की रक्षा करती है। अहा ! खूँटा तो पशुओं की जान है, यदि खूँटा न होता तो इन्हें कितनी तकलीफ होती, जानते हो !

महापथ—सब मर जाते जनाब, खूँटा तो पशुओं का भगवान् है।

ज्ञान—समुद्र, तुम कभी गाते भी हो ?

समुद्र—गाता था और खूब गाता था, पर अब घिसने घिसाने के डर से गाना तो क्या, मैंने रोना भी छोड़ दिया। नहीं तो मेरे जैसा गाना क्या सब को आता था ?

ज्ञान—कुछ सुनाओ न ?

महापथ—हाँ भाई, कुछ सुनाओ न ?

समुद्र—सुनिये। (गाता है)

झुकी है झमक घटा घनघोर,
कड़क उठी बिजली आँखें बन, चमक उठी जग कोर
झुकी है झमक घटा घनघोर

ज्ञान—बड़े सुन्दर पद हैं, वाह क्या कहने !

समुद्र—(गर्व से फूल कर)

पवन पथ पर नाच रहे थे मेघ भरे उल्लास
नीचे लगे नाचने सुन्दर जग के मृदु उच्छ्वास
गर्जना सुन मन हुआ विभोर
झुकी है झमक घटा घनघोर

ज्ञान—(प्रसन्न होकर) खूब, बहुत खूब, मेघों का नाच

कितना सुन्दर है !

'पवन पथ पर नाच रहे थे मेघ भरे उल्लास'

महापथ—जरा नीचे का पद भी तो देखिये।

'नीचे लगे नाचने सुन्दर जग के मृदु उच्छ्वास'

महाराज, ताले में अटकी हुई ताली के समान मेरा मन इस गीत में अटक गया है।

समुद्र—मुझसे पूछो तो मेरे मन में यह गीत कछुए के हाथ पैर की तरह घुस गया है।

ज्ञान—अरे, तुम सब ने तो कह लिया, पर मेरे मन का क्या हाल है, जानते हो ?

महापथ—हाँ महाराज, झाड़ी में हिरन के समान आप का मन इस गीत में उलझ गया होगा। आपका मन इसके पद सौन्दर्य को चर कर ज़रूर बैल की तरह काम और अतृप्ति की जुगाली कर रहा होगा।

ज्ञान—ठीक, बात तो तुमने लाख रुपये की कही महापथ, लाख रुपये की !

(प्रतिहारी का प्रवेश)

प्रतिहारी—जय हो महाराज की, महाराजाधिराज का एक दूत संदेश ले कर आया है, जैसी आज्ञा हो।

ज्ञान—हैं ! महाराज का दूत ? अच्छा जाओ भेज दो।

प्रतिहारी—(सिर झुकाकर) जो आज्ञा।

(जाता है)

ज्ञान—समुद्र, दिनरात राज्य के झगड़े। दूत के रूप में यमराज का वाहन होगा।

समुद्र—हाँ, और क्या ? आज्ञा क्या होगी-ग्रीवा के उभार का, जिह्वा की चेष्टा का और यत्न से निकले अक्षरों का उत्सव होगा। भला, पूछो इन बछिया के ताऊ दूतों से कि तुम्हें क्या पड़ी जो इधर से उधर पर फटकारते हो, ईश्वर-प्रदत्त मास को घिसाये डालते हो !

महापथ—चले आये जैसे सर्प बिल में जाता है, गाय नाँद पर जा डटती है। उठते बैठते जब देखो तब दूत, दूत हैं या भूत ?

(दूत का प्रवेश)

दूत—जय हो सूबेदार साहब की। महाराजाधिराज ने यह आज्ञापत्र भेजा है। (सवादपत्र देता है, ज्ञानबुद्ध पत्र हाथ में लेकर) सिर से लगा कर पढ़ता है)

ज्ञान—(पत्र पढ़ता हुआ भौंचक्का सा रह जाता है । दूत से) जाओ । (दूत जाता है) हाय, फिर वही ! (घबरा कर सुस्त हो जाता है)

समुद्र—क्या हुआ महाराज, कुछ लग गया क्या ?

महापथ—(समुद्र से) पत्र में ज़रूर कोई ऐसी बात होगी, जो ।

समुद्र—जो सूबेदार साहब के मन से उल्टी के समान बाहर निकलना चाहती होगी।

महापथ—नहीं, क्या महाराजाधिराज के महल में साँप निकलने की बात नहीं हो सकती ?

समुद्र—क्यों नहीं, पर किसी को कुत्ता भी तो काट सकता है, गाय भी तो बिदक सकती है !

महापथ—घर में आग भी लग सकती है, किसी का पाँव कीचड़ में भी फिसल सकता है !

ज्ञान—नहीं समुद्र, महाराज का सवाद आया है कि युद्ध की तैयारी करो। अरबियों का देवल पर आक्रमण होनेवाला है। सेना की भर्ती प्रारम्भ होनी चाहिये। युद्ध होगा।

समुद्र—अरे बापरे, युद्ध होगा ! (उठकर इधर उधर छिपने की कोशिश करता है, फिर लौट आता है।)

महापथ—युद्ध ! (हैरान होकर) युद्ध बड़ी भयानक चीज है। हम बौद्ध लोगों का युद्ध से क्या सम्बन्ध ?

समुद्र—ठीक है, हम लोगों का युद्ध से क्या सम्बन्ध !

ज्ञान—नहीं समुद्र, मुँह खोल कर मना भी तो नहीं किया जाता, पर मुझ से युद्ध न होगा।

महापथ—नहीं महाराज, युद्ध तो हम लोगों के धर्म के विरुद्ध है। भगवान् ने हिंसा का निषेध किया है। ललित विस्तर में लिखा है —

मैत्रीबलेन जित्वा पीतो मेऽस्मि नमृतमण्ड
करुणाबलेन जित्वा पीतो मेऽस्मि नमृतमण्ड

महाराज, मैत्री और करुणा के बल से संसार के श्रावकों, बौद्धों और बोधिसत्वों ने अमृत पान किया है। हिंसा तो हमारी शत्रु है। भगवान् ने दया, करुणा, वीतरागिता द्वारा संसार विजय माना है।

ज्ञान—नहीं, हम लोगों के विचार से युद्ध करना अधर्म है, और महापथ, तुम जानते हो मैं अधर्म का पालन नहीं कर सकता, भगवान् के आदेश के विरुद्ध नहीं चल सकता!

महापथ—कभी नहीं श्रीमान्, अधर्म क्या हम तो ऐसे धर्म का पालन भी न करें!

समुद्र—धर्म के विरुद्ध बात मानी भी नहीं जा सकती और माननी भी नहीं चाहिये, क्यों महापथ?

महापथ—हाँ, और क्या? हम क्या कोई पशु हैं जो धर्म के विरुद्ध आचरण करें।

ज्ञान—किन्तु मैं स्पष्ट रूप से महाराज का विरोध भी तो नहीं कर सकता।

समुद्र—(हैरान होकर) हाँ, आप तो विरोध भी नहीं कर सकते!

महापथ—अरे भाई विरोध, विरोध का तो विचार भी नहीं कर सकते।

ज्ञान—सेनाएँ तैयार करनी होंगी—अच्छा, समय बता देगा कि मैं क्या कर सकता हूँ, क्यों समुद्र ?

समुद्र—हाँ, सो तो है ही श्रीमन् !

महापथ—यथार्थ है, मेरे देवता !

ज्ञान—तुम बड़े गुणी हो, महापथ ।

महापथ—गुणों की परीक्षा क्या सब कहीं होती है महाराज, किसी ने ठीक कहा है—

गुन न हिरानो गुनगाहक हिरानो है ।

समुद्र—किसी ने क्या ही ठीक कहा है —

मानव बनाये, देव दानव बनाये
यक्ष किन्नर बनाये, पशु पक्षी नाग कारे हैं
द्विरद बनाये, लघु दीरघ बनाये
केते सागर उजागर बनाये नदी नारे हैं
रचना सकल लोक लोकन बनाय ऐसी
जुगति में 'बेनी' परवीनन के प्यारे हैं
(आपको) बनाय विधि धोयो हाथ जाम्यों रंग
ताको भयो चन्द्र, कर झारे भये तारे हैं

महापथ—वाह क्या खूब, "आपको बनाय विधि धोयो हाथ जाम्यों रंग, ताको भयो चन्द्र, कर झारे भये तारे हैं ।

ज्ञान—किन्तु समुद्र इसका गुण से क्या सम्बन्ध है ?

महापथ—हाँ भाई, इसका गुण से क्या सम्बन्ध है ?

समुद्र—सम्बन्ध, महाराज सम्बन्ध तो बहुत है, पिता का पुत्र से, नानी का नाना से और आम का जामुन से ।

ज्ञान—समुद्र, तुम बड़े चतुर हो ।

महापथ—और महाराज मैं ।

ज्ञान—तुम भी, पर युद्ध का क्या किया जाय ?

दोनों—(गुमसुम होकर) हाँ महाराज, युद्ध का क्या किया जाय ?

(सब ठोड़ी पर हाथ रख कर सोचते हैं)

पटपरिवर्तन

चौथा दृश्य

(सिन्ध के उस पार अब्दुल्ला अपने सेनानायकों के साथ बैठा है।)

अब्दुल्ला—सब कुछ तैयार है। खुदा ने चाहा तो कल ही लड़ाई छिड़ जायगी। मैंने फौज को लड़ने के लिये बाँट तो दिया ही है। क्यों रहमान, क्या कुछ बाक़ी है?

रहमान—श्रीमन्, बस अब तो लड़ाई ही बाक़ी है और बाक़ी है हमारी विजय।

अब्दुल्ला—तुम सब लोग तैयार हो न?

रहमान—"तैयार" से अगर अधिक कुछ हो तो हम वह भी हैं जनाब!

अब्दुल्ला—अनीफ तुम?

अनीफ़—मैं भी महाशय।

कादिर—मैं भी सेनापति।

अब्दुल्ला—तुम कैसे लड़ोगे रहमान?

रहमान—मैं आग की तरह जलाऊँगा।

अनीफ़—मैं बिजली की तरह शत्रु पर गिरूँगा।

कादिर—मैं हवा की तरह उड़ूँगा और शत्रुओं का सिर भुट्टा सा उड़ा दूँगा।

अब्दुल्ला—रहमान, तुम दायें हो कर लड़ना, कादिर तुम बायें होकर और अनीफ तुम फौज के सामने यानी हमारे पीछे होकर।

सब—जो आज्ञा।

अब्दुल्ला—याद रखना पीछे पैर न हटाना ?

सब—(कदम पीछे हटा कर) कदम पीछे हटाना, यह तो हम ने सीखा ही नहीं सेनापति !

अब्दुल्ला—ठीक है, जाओ विश्राम करो, मैं भी थकामाँदा हूँ। किन्तु रहमान, एक बात का सदेह है, क्या सिन्धी लड़ना जानते हैं ?

कादिर—हाँ सेनापति, यह प्रश्न तो अभी बाक़ी ही है, अगर वे लोग लड़ना न जानते होंगे तो हम कैसे लड़ेंगे ?

रहमान—मेरा खयाल है कि वे लोग लड़ना नहीं जानते। शायद अलाफी और उसके आदमी ही केवल लड़ने के लिये आयेंगे।

अनीफ़—पाँच सौ अरबी हम लोगों का मुकाबिला नहीं कर सकते।

अब्दुल्ला—तो फिर हम लोगों की विजय निश्चित है।

सब—विचार तो ऐसा ही है।

अब्दुल्ला—मेरा ख्याल है कि हमें एक तरह अभी से विजय की खुशी मनानी चाहिये।

रहमान—ठीक है, शायद फिर मौका न मिले!

अब्दुल्ला—जाओ, विश्राम करो, मौज उड़ाओ।

(सब जाते हैं)

पटपरिवर्तन

चपाकर—महाराज, आज्ञा हो तो प्रार्थना करूँ?

दाहर—हाँ, कहो।

चपाकर—महाराज, सूबेदार का निर्णय तो होगा ही, इस समय हमें कुछ और भी ।

दाहर—(सोच कर) ठीक है। जिन लोगों ने युद्ध में विजय प्राप्त की है उनको राज्य की ओर से पारितोषिक मिलना चाहिये। जयशाह, अपने वीरों की सूची बना कर हमारे सामने लाओ।

जयशाह—महाराज, एक प्रार्थना है कि इस विजय के उपलक्ष्य में लोहान, जाट और गूजर जाति के ऊपर से वे बन्धन हटा दिये जाँय जिनमें आज तक वे लोग जकड़े रहे हैं। इस बार और पिछले युद्ध में इन लोगों ने राज्य की आवश्यकता से अधिक सहायता की है।

(सभास्थल में सन्नाटा सा छा जाता है।)

पुरोहित—पृथ्वीनाथ, धर्मशास्त्र इन लोगों के साथ कोई ऐसा व्यवहार करने की आज्ञा नहीं देता जिससे ये लोग उच्च जाति के लोगों से मिल सकें। स्वर्गीय महाराज चच ने जो विधान बनाये थे उन में ।

दाहर—नहीं पुरोहितजी, व्यवस्था समय के अनुकूल होनी चाहिये।

पुरोहित—कर्म और जन्म के विचार से एक पशु कभी तप करने पर भी ब्राह्मण नहीं बन सकता महाराज !

अन्य ब्राह्मण—पुरोहित जी ठीक कह रहे हैं।

दाहर—नहीं, कर्म की श्रेष्ठता प्रत्येक व्यक्ति के अपने दैनिक व्यवहार पर निर्भर है। लोहान, जाट और गूजरों में वैसा ही क्षत्रियत्व है जैसा कि वीरता का कार्य करनेवाले अन्य क्षत्रियों में।

चपाकर—पुरोहित जी, संसार में कोई ऊँचा नीचा नहीं है। यह भेद भावना मनुष्य-कृत है। देखिये, भगवान् का बनाया हुआ सूर्य सब को एक सा प्रकाश देता है। वायु सब को एकसा जीवन देता है; तुम्हें अधिक और उनको, जिन्हें तुम नीच कहते हो, न्यून जीवन नहीं प्रदान करता।

पुरोहित—प्रचीन धर्म का उल्लंघन भी तो नहीं किया जा सकता महाराज ! स्मृतियों के विरुद्ध क्या अब एक हिन्दू राजा को चलना होगा ?

दाहर—स्मृतियाँ भी ऋषियों ने बनाई हैं। क्या समय की आवश्यकता के अनुसार ऋषियों ने उनमें परिवर्तन नहीं किये हैं ? यदि सब स्मृतियाँ एक सी हैं तो इतनी स्मृतियों के निर्माण का क्या प्रयोजन ? इससे स्पष्ट है कि वे स्मृतियाँ समय के अनुसार ही लिखी गई हैं।

पुरोहित—किन्तु स्मृतिकार ऋषि लोग ही उनमें

परिवर्तन कर सकते है, हम ससारी जीव नहीं।

दाहर—ठीक है, स्मृतिकार ऋषि लोग ही इसमें परिवर्तन कर सकते हैं। पर यह बतलाओ कि इन जातियों को गिराने की चेष्टा किसने की? हमारे महाराज चच ने ही तो! वे कौन ऋषि थे? इससे पूर्व क्या इन लोगों के साथ वैसा ही व्यवहार होता था, जैसा कि आज? पुरोहित जी, जब मेरे पिता ने इनकी अवस्था को इतना गिरा दिया, तब क्या मेरा कर्तव्य नहीं कि मैं आवश्यकतानुसार इनको फिर उठा सकूँ।

(सारी ब्राह्मण मडली कानों पर हाथ रख कर निरुत्तर हो जाती है।)

दाहर—ज्ञपाकर, आज से मेरे राज्य में इन लोगों के साथ किसी प्रकार का अत्याचार न हो। उनको पूर्ववत् अधिकार दिये जायँ तथा वत्सराज को आज्ञा दी जाय कि वे अपने प्रदेश में लोहानों, जाटों और गूजरों की सेना तैयार करें।

ज्ञपाकर—जो आज्ञा। (सारी सभा कुछ लोगों को छोड़ कर जयनाद करती है।)

जयशाह—एक प्रार्थना और ।

दाहर—हाँ, कहो।

जयशाह—महाराज, इस युद्ध में मेरे लोहान वीरों ने ही सहायता दी है, और उनमें जिसने अब्दुल्ला का सिर

काटा है वह वीर मानू है (उसे खड़ा कर के) देखिये, इसी ने आज हमारे राज्य की रक्षा की है। मेरी प्रार्थना है कि इस वीर को अरुण का सेनापति बनाया जाय।

सब—(देश भक्ति से गद्‌गद हो कर) धन्य हैं, धन्य हैं।

दाहर—अवश्य, वीरों का पुरस्कार खड्‌ग है (इतना कहकर दाहर उसे खड्‌ग देते हैं, मानू सिर झुका कर ग्रहण करता है) तुम जैसे वीरों पर सिन्ध को गर्व है।

सब—धन्य हैं, धन्य हैं।

दाहर—वीर मानू, आज से तुम देवल के सेनापति नियुक्त हुए।

मानू—(सिर झुका कर) महाराज की बड़ी कृपा। देव! वीरता किसी की बपौती नहीं है, साहस किसी के घर पैदा नहीं हुआ, विजय की माता वीरता संसार भर को अपनी कटीली विभूति बाँटती है, हमारी जाति को भी वह कुछ न कुछ मिली ही है। सिन्ध की रक्षा के लिये सारी लोहान जाति अपना तन मन धन अर्पण कर देगी।

सब—जय हो महाराज दाहर की, जय हो सिन्ध देश की, जय हो वीरवर मानू की।

दाहर—अच्छा, अब सभा विसर्जित होती है। (सब जाते हैं तथा महाराज के संकेत से मन्त्री, जयशाह आदि कुछ विश्वस्त लोग रह जाते हैं, केवल ज्ञा बुद्ध आज्ञा की प्रतीक्षा में बाहर खड़ा रहता है।)

जयशाह—ज्ञानबुद्ध ने इस युद्ध में जिस कायरता का परिचय दिया उसे देखते उस पर विश्वास नहीं होता कि उसे आगे भी इस पद पर रहने दिया जाय।

दाहर—नहीं, राजनीति के अनुसार वह इस योग्य सिद्ध नहीं हुआ।

प्रभाकर—महाराज, मेरा विचार है सेना सम्बन्धी सब भार वीर मानू को सौंपा जाय, तथा राज्य व्यवस्था के लिये ज्ञानबुद्ध ही रहें। महाराज, ज्ञानबुद्ध के निकालने से सारे बौद्ध बिगड़ बैठेंगे।

दाहर—(सोच कर) तुम्हारा विचार मुझे उपयुक्त ज्ञात होता है मन्त्री जी। क्यों जयशाह ?

जयशाह—जो महाराज की इच्छा।

दाहर—मंत्री, ज्ञानबुद्ध को बुलाओ। (मन्त्री के संकेत से प्रतिहारी ज्ञानबुद्ध को बुलाता है।)

(ज्ञानबुद्ध सिर झुका प्रणाम कर के एक ओर खड़ा हो जाता है।)

दाहर—ज्ञानबुद्ध, देवल की सेना का भार मानू को दिया जाता है और राज्य का प्रबन्ध तुम्हारे हाथ में रहेगा।

ज्ञान—(खिन्न होकर) जैसी प्रभु की आज्ञा !

जयशाह—यही ठीक है, हमें विश्वास है शत्रु फिर उठेगा।

दाहर—मैं ज्ञानबुद्ध को देवल की राजव्यवस्था का प्रबन्धक बनाता हूँ। जाओ ज्ञान, भगवान् बुद्ध के विवेक का बल लेकर हिन्दुओं की वीरता ग्रहण करो। संसार में केवल ठीक राज्यव्यवस्था रखने से ही काम नहीं चलता, उसकी नींव दृढ़ करने के लिये वीरता, देशप्रेम और विवेक की भी आवश्यकता है। हम अब अलोर को जाते हैं और तुम देवल की रक्षा में अधिक उत्साह से उद्यत हो।

ज्ञान—(सिर झुका कर) जो आज्ञा।

(सभा विसर्जित होती है।)

पटाक्षेप

———

तीसरा अंक

पहला दृश्य

इराक़ की राजसभा—

(हैजाज़ अपने दरबार में बैठा है, सभा में सन्नाटा है।)

हैजाज—(दुःख से) आज फिर हम लोगों की आशा पर पानी पड़ गया। अरब का भाग्य चक्र समय के घुमाव के कीचड़ में फँस गया। ताज़े खजूरों में भी सड़ाँयद उठने लगी। जीवन की दिशा करवटें बदल कर फिर सो गई। फूल तोड़ते समय काँटों पर हाथ पड़ा। सारे हाथ छिल गये। (क्रोध से) पर अब तो यह नहीं सहा जाता। ऐ खुदा, क्या तुझको यही स्वीकार है? क्या तू अपना क़हर शत्रुओं पर नहीं डालना चाहता? क्या हम अब अरब क बाजारों तक ही सीमित रहेंगे? क्या हज़रत की इच्छायें पूरी न होंगी? क्या मेरे खलीफा का गोला हिन्दोस्तान की सीमाओं से टकरा कर वापिस लौट आयगा? नहीं, यह न होगा। शत्रुओं की अभिलाषाओं को तोड़ मरोड़ कर अरब सागर में बहा देना होगा। अच्छा देखो, खलीफा साहब अब क्या जवाब देते हैं। पर नहीं, मैं

यों न मानूँगा। ईमान और देश के इतिहास में हैज़ाज का नाम पराजय में नहीं लिखा जा सकेगा।

(दरबान का प्रवेश)

दरबान—हुजूर, देवल के सूबेदार का एक आदमी आया है।

हैजाज—क्या, देवल के सूबेदार का आदमी? अवश्य इसमें कुछ रहस्य है। भीतर आने दो। (जाता है)

(दूत का प्रवेश)

दूत—(प्रणाम करके) देवल के सूबेदार ने श्रीमान् की सेवा में यह चिट्ठी भेजी है। (चिट्ठी देता है)

हैजाज—(चिट्ठी हाथ में लेकर पढ़ता है, खुशी से फूल कर) हज़ार बार धन्यवाद है उस खुदा का। बस, अब मैदान मार लिया। मेरे प्यारे सभासदो, देवल के सूबेदार ने अब्दुल्ला की मृत्यु पर शोक प्रकट करते हुए क्षमा याचना की है। वह लिखता है कि हम लोग बौद्ध हैं। हमें लड़ाई से कोई सरोकार नहीं। यदि इस बार आप सिन्ध पर हमला करें तो हम आपके सहायक होंगे, क्योंकि हमारे श्रमण इस बार आप की ही जीत समझते हैं।

सभासद्—बहुत ठीक, बहुत ठीक।

हैजाज—(दूत से) जाओ, हमारी तरफ से सूबेदार से कहना हमने उसका अपराध क्षमा किया। यदि इस बार शत्रु हारा तो उसे उचित पारितोषिक दिया जायगा। (दूत सलाम करके जाता है।)

(दरबान का प्रवेश)

दरबान—श्रीमन्, पूज्य खलीफा साहब का एक आदमी आया है।

हैजाज– आने दो।

दरबान—जो आज्ञा। (जाता है)

हैजाज—देखना चाहिये गुरु जी क्या आज्ञा देते हैं इस बार तो पौबारह हैं। यह किश्त और यह मात (मूछों पर ताव देता है।)

(खलीफ़ा का रुक्का लिये दूत का प्रवेश, दूत सलाम करके रुक्का देता है।)

हैजाज—(पढ़ते हुए) ठीक, ठीक बहुत ठीक—मेरे प्यारे दीवान, हज़ूर फिर हमला करने को कहते हैं। और इस बार दूने उत्साह से। अलहजूरी, देवल के सूबेदार के सदेश के साथ धर्माचार्य को हमारी तरफ से पूरी तैयारी की सूचना दे दो।

अलहजूरी—जो हुक्म (रुक्का लिख कर देता है, दूत जाता है।)

हैजाज—हे वीरो, इस वार हमारी विजय है। म चाहता हूँ तुम में से कोई वहादुर इस वार आक्रमण के लिये तैयार हो। (दरबार में सन्नाटा छा जाता है, एक नव युवक उठता है।)

नवयुवक—प्रभो, मैं इस वार अपने भाग्य की परीक्षा ।

हैजाज—(प्रसन्न हो कर) मेरे वहादुर बच्चे मुहम्मद बिन कासिम, मुझे पूर्ण विश्वास है कि तुम इस वार जीतोगे। कल मैंने ज्योतिषियों से भी पूछा था। उन्होंने इसवार हमारी विजय का सदेशा दिया है। अच्छा, मैं तुम्हें सेनापति बनाता हूँ। सेना की तैयारी करो। इस वार साठ हजार सेना के साथ हमला करो। (सब लोग मुहम्मद बिन कासिम की तरफ़ हसरत की निगाह से देखते हैं।) आओ, मैं तुम्हें अपने हाथ से कवच पहनाना चाहता हूँ (पहनाने लगता है।)

मुहम्मद बिन कासिम—(तलवार हाथ में लेकर) हुजूर, आज भरे दरबार में मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि यह कासिम विजयी हुए विना नहीं लौटेगा।

सब—आमीन आमीन।

हैजाज—जाओ मेरे वहादुर, खुदा तुम्हारी सहायता करे।

(दरबार का एक कवि उठ कर गाता है ।)

कवि —हे अरब-दुलारे जाओ, दुश्मन को खूब छकाओ ।
निज देश धर्म की रक्षा करना बढ़ बढ कर लड़ना
मत पीछे कदम हटाना मत दाएँ बाएँ जाना
दुनियाँ को रंग दिखाना, अपना सब देश बनाना
हे अरब-दुलारे जाओ, दुश्मन को खून छकाओ ।

हैजाज—बस बस । अब देर की जरूरत नहीं है ।

(सब दरबारी तलवारें उठा कर विजय विजय चिल्लाते हुए जाते हैं ।)

पटाक्षेप

दूसरा दृश्य

(देवल का राजपथ, कुछ ब्राह्मण तथा बौद्ध श्रमणों की परस्पर बातचीत)

देवकी—वाह, खूब युद्ध हुआ। हमारे युवराज भी कितने वीर हैं। शत्रु एक मोर्चा भी न ले सका।

सशय—पर अपने राम को इसमें कुछ भी भलाई नहीं देख पड़ती। जनार्दन, अब तुम क्या करोगे?

मधुआ—क्यों, भलाई क्यों नहीं देख पड़ती महाराज, क्या युद्ध में शत्रुओं की हार में आपको कुछ सन्देह है?

सशय—नहीं भाई, ग्रहों का उत्पात, अशुभ लक्षणों का होना ही हमें देख पड़ रहा है। शिव! शिव!

देवकी—बुद्धि के शत्रु ऐसे ही होते है, मधुआ।

सशय—अरे, महाराज ने लोहान और जाटों को पूर्ववत् अधिकार दे दिये अर्थात् उन्हें हमारे वर्ण के साथ मिला दिया। क्या अब राज्य सुरक्षित रह सकता है? अर्थात् क्या राज्य रह सकता है, भाई! शूलपाणि, देख रहे हो? प्रकृति प्रत्यय का नाश हो गया! आँधी से आम का बौर टूट टूट कर गिर रहा है। देवकीनन्दन, तनिक तो देखो!

महापथ—युद्ध क्या कोई करने की चीज है? भगवान् बुद्ध ने इसका निषेध किया है। पाँच शीलों में भी इसका वर्णन नहीं है। अहिंसा के विरुद्ध बौद्ध लोग तो जा नहीं सकते, भाई।

देवकी—देश का दुर्भाग्य है जो महापथ और सशयचन्द्र जैसे आदमी सिन्ध में उपस्थित हैं। देशनिद्रोही, धर्मविद्रोही लोगों का नाश हो जाना ही ठीक है। (सशय और महापथ से) तुम लोगों के कारण ही देश का नाश होगा। धर्म की रूढियों के साथ खूँटे की तरह बँधे रहनेवाले ये ढोंगी पुरुष देश के नाश का कारण-बनेंगे। अहिंसा का राग अलाप कर देशद्रोह का झण्डा खड़ा करनेवाले बौद्ध क्या आज सच्चे बौद्ध हैं? इन पण्डितों और आडम्बर से स्वार्थ सिद्धि करने वाले छूँछे ज्ञानियों ने कब देश का साथ दिया है? यह आज कोई अनोखी बात नहीं है।

मधुआ—तो क्या देवकी इन लोगों का कहना झूठ है?

सशय—क्या हम लोग धर्म के विरुद्ध बात कहते हैं अर्थात् क्या धर्म हमारे साथ नहीं है, देवकी? पुरुषोत्तम, तुम कब आओगे?

महापथ—क्या तुम बौद्ध ... ज्ञाता हो ...
भगवान् पर कटाक्ष करते हो। ... हम ...

नहीं है ? हम लोग मन, वाणी, कर्म से बौद्ध हैं। बौद्ध लोग किसी पर अत्याचार करना जानते ही नहीं। यदि शत्रु लोग आयें तो इसमें हर्ज ही क्या है ? हमारे लिये तो मुसलमान और हिन्दू का राज्य एक जैसा है।

शशय—और जब हमारे ज्योतिषशास्त्र के अनुसार ग्रहों की कुदृष्टि है तो इस दृष्टि को हटा कर शत्रु के सिन्ध प्रवेश को अर्थात् शत्रु के इधर सिन्ध पर राज्य करने को कौन रोक सकता है ? जिस देश में उच्चवर्णों के साथ नीचों को मिला दिया जाय, वहाँ भगवान् उसकी रक्षा कैसे कर सकते हैं, अर्थात् अब नाश तो अवश्यम्भावी है। हे यशोदानन्दन, कब तक प्रतीक्षा करें ?

देवकी—(दाँत पीस कर) अरे दुष्टो, तुम इतने नीच और पतित हो गये हो, इसका हमें ज्ञान नहीं था। होनहार और अन्ध धर्म के श्रद्धालुओ, क्या तुम में विवेक और बुद्धि का इतना अभाव है जो तुम एक देशी और विदेशी राज्य के सम्बन्ध में विचार भी नहीं कर सकते। देश और धर्म के शत्रुओ, क्या तुम्हें यह ज्ञान नहीं कि शत्रु और मित्र में कितना अन्तर है ? कौन तुम्हारा हितू है और कौन अहितू ? क्या वे अरबी यहाँ आकर राज्य करते हुए हमारे मित्र बन जाँयगे ! आज, शत्रु कितने दिनों से इस देश पर दाँत

यह आज समय फिर आया है रुद्राट्टहास का सगर में
कण कण कर अरिदल दल देंगे रक्तों के न्हाकर सागर में

(सब जाते हैं)

पटपरिवर्तन

तीसरा दृश्य

स्थान—अलोर के बाहर उद्यान में—

(सूर्य और परमाल देवी का प्रवेश।)

सूर्य—वासना के मुख पर कालौंच लगा कर, लज्जा की कन्था फाड़ कर आज मैं निकली हूँ अमर जीवन के उन्नत वक्षस्थल पर नाचने। स्वर्ग की घटाएँ, संसार के वैभव अब मुझे भरमा नहीं सकते। इन वृक्षों के पत्तों के समान समय के समीरण से उत्तेजित होकर नाचूँगी। परमाल, जानती हो मेरे इस ताण्डव का क्या प्रभाव होगा? शिव के ताण्डव के समान मेरु हिलने लगेगा, शेष काँप उठेगा, समुद्र सिहर उठेगा, पर्वत डगमगाने लगेंगे, और धरा धड़कने लगेगी। आज अवसर है, संसार को मैं दिखला दूँगी कि मैं क्या कर सकती हूँ!

पर—बहन, इतने आवेश में आने का कारण?

सूर्य—परमाल, आज तू मेरे आवेश में आने का कारण पूछती है तो ले सुन। विधाता के कोप की तरह शत्रु फिर एक बड़ी सेना के साथ सिन्ध को विध्वंस करने आया चाहता है। इस बार अन्त है। पिताजी सैन्यसंगठन में व्यस्त हैं।

सारा देश युद्ध की घटाओं से घिरा है। पश्चिम से बादल उठा है। विश्व को कँपानेवाली आँधी उठी है। सिन्धी लड़ने में आनाकानी कर रहे हैं। ऐसे समय क्या किया जाय? सुन, मैंने निश्चय किया है कि सिन्ध के घरों, झोपड़ियों, प्रासादों में जाकर देशभक्ति का उन्मादी गीत गाऊँगी। कायरों को वीर और वीरों को रण के लिये उन्मत्त बना दूँगी। इस पर भी तू पूछती है मेरे आवेश में आने का कारण? छी! बहन, क्या अब यह कहने का अवसर है?

पर—बहन, क्या विश्वप्रेम और करुणा दोनों भावनाएं जीवन की सुन्दर वस्तुएँ नहीं हैं? क्या जातीयता प्रान्तीयता की विभूति ही सब कुछ है? क्या आत्मा और आत्मीयता की परिलुप्ति में वास्तविक जीवन का सुख है? मैं तो समझती हूँ विवेक पूर्ण परतन्त्रता उच्छृंखल स्वाधीनता से कहीं बढ़ कर है! विनाश की ओर जाना ही जीवन प्रगति की 'इति श्री' है।

सूर्य—हाय! आँधी और तूफान में कोमलता की भावना, प्रचण्ड अग्नि में सन्तोष की कामना और सर्वाङ्गव्यापी विनाशक विष की प्रबलता में क्या हाथ पर हाथ रख बैठे रहने से काम चलता है? जिस विश्वप्रेम का तू राग अलाप रही है वह पीब भरे घाव में नश्तर न लगा कर उसे दवा देने की चेष्टा के समान है। मृत्यु की पीड़ा से कराहते हुए पुरुष के

सामने विहाग के राग अलापने के समान है। आज जब शत्रु साठ हजार सेना लेकर सिन्ध पर आक्रमण किया चाहता है, घमासान युद्ध होगा; खूनखच्चर हो जायगा। उस समय पुरुषों के साथ स्त्रियों का क्या कर्तव्य है, यही आज हम सिन्ध की नारियों को सीखना है। हमारे भाई और पिता युद्ध में लड़ें और हम हाथ पर हाथ रखकर बैठी रहें, यही क्या हमारा कर्तव्य है? क्या स्त्रियाँ केवल देखने की वस्तु हैं, क्या करने का भार पुरुषों के हिस्से में ही आया है, क्या वे पुरुषों के समान सुख का उपभोग नहीं करतीं, क्या परतन्त्रता के दुख से केवल पुरुषों को ही दुख होगा, स्त्रियों पर उसका कुछ प्रभाव नहीं पड़ेगा? नहीं बहन, अब हमें उठना पड़ेगा।

पर—ठीक है, मैं साहित्य की रुचिर रूप राशि पर मुग्ध थी। दार्शनिकता, भावप्रवीणता की विस्मयकारी झाड़ियों में फँसी थी। आज मुझे ज्ञान हो गया कि स्त्रियाँ क्या हैं? उन में भी तीक्ष्णता, उग्रता और प्रचण्डता की चिनगारियाँ हैं। आत्मरक्षा, देशहित की उत्कट अभिलाषाओं का उद्रेक है। मैं भूली रही। आज मेरी आँखें खुली हैं। बहन, मैं तुम्हारी अत्यन्त कृतज्ञ हूँ। (आत्मग्लानि से रो कर बहन की गोद में गिर पड़ती है)

सूर्य—(प्यार से) मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। तुम में आज

असली स्त्रीत्व आ गया। तुम में भी सब शक्ति है, केवल इस बात का ज्ञान और बोध होने की आवश्यकता थी। देखो, सुनो, यह कौन गा रहा है-(दोनों सुनती है।)

(नेपथ्य में देवकी और मधुआ का गाना सुनाई देता है।)

दोनों—उठो वीर भारत माता के, माँ ने तुम्हें बुलाया है
कस कर कमर अमर बनने का सुन्दर अवसर आया है
शत्रु उठा आता आँधी सा करने को यह देश विनाश
पीस डालना उसे कुचल कर, रखना भारत माँ की आस
रण में जीवन देना डट कर सम्मुख यह सिखलाया है
उठो वीर भारत माता के, माँ ने तुम्हें बुलाया है।

सूर्य और पर—वाह, क्या सुन्दर गाना है। (आगे सुनती हैं)
वीर भावना जगे नसों में वीरों के से काम करें
वीरों जैसा मरना सीखें वीर बनें कुछ नाम करें
सिन्ध देश के चद्रबिम्ब पर अरब राहु बन आया है
उज्ज्वल करना मर मुख इसका यह ही जीवन काया है
माता आँसू बहा रही है हृदय उभरता आता है
इसे सँभालो गले लगालो, कायर ही कतराता है
समय परीक्षा देशभक्ति की लेने को यह आया है
उठो वीर भारत माता के, माँ ने तुम्हें बुलाया है
(दोनों रण भूमि में आ जाते हैं।)

सूर्य—(आगे बढ़ कर) ठीक, ठीक! इस गाने का ठीक यही समय है। चन्द्रमा में लगे हुए लाछन को धो डालने का यही समय है। युद्ध के बवण्डर से शत्रु को उड़ा देने का यही समय है। भाई, तुम कौन हो?

देवकी—भूमि भार से थके हुए शेष के उच्छ्वास, परतन्त्रता की आँधी के लिए घनघोर घन की वर्षा के दो कण?

मधुका—वज्रस्फोट के छोटे से निनाद। विद्युत् धारा की दो तरंगें।

सूर्य—और शत्रुओं को कुचल डालने के लिए उत्साह और उत्तेजना के दो रूप! वीरत्व के दो आक्रमण, आओ मैं तुम्हारा स्वागत करती हूँ यह मेरी बहन परमाल है और मैं हूँ महाराजाधिराज दाहर की अकिंचन कन्या सूर्य।

देवकी—(सभ्रम से) माता आप की जय हो। हम आप को प्रणाम करते हैं।

सूर्य—हाँ, फिर एक बार माता की पुकार सुनाओ। मेरा हृदय सुनने को बेचैन हो रहा है। (फिर सुनते हैं, सुन कर) धन्य हो वीरो, धन्य हो। आओ, सब लोग मिल कर मातृ भूमि को शत्रुओं के आक्रमण से बचाने के लिये सिन्ध के प्रत्येक नर और नारी को नींद से जगावें।

देवकी और मधुका—(सिर झुका कर) जो आज्ञा।

सूर्य—अरूण, ब्राह्मणावाद, शिवस्थान, देवल आदि सारे प्रान्तों में बिजली के समान कड़को, आँधी के समान उड़ो, बादल के समान गरजो और कायर देशद्रोहियों को युद्ध के लिये उत्साहित कर दो। जाओ, मैं भी अपनी बहन के साथ देश देश घूमूँगी, वनों में विचरूँगी, पहाड़ों, को छान डालूँगी लोगों को एकत्र करूँगी, और उन्हें सेना में भरती होने के लिये उभारूँगी।

देवकी—माता, आपके लिये क्या असम्भव है? स्त्रियाँ यदि चाहें तो संसार को उलट दें। मुझे विश्वास है,—

धमक जायगी धरा कँपेगी भूधरमाला
कड़केंगी जब स्त्रियाँ प्रखर बन विद्युज्ज्वाला
रुधिर धार बन सिन्धु शत्रु को मृत कर देंगी
पल पल शतदल काट रुधिरसागर भर देंगी
बिन्दु बना कर उदधि, उदधि को कण कर दोगी
शक्ति समुद्र नसों में जग की फिर भर दोगी

सूर्य—(हँस कर) वीर देवकी, घबराओ मत, स्त्रियों की प्रत्येक निश्वास देश की रक्षा के लिये होगी। उनकी प्रत्येक उमंग पुरुष जाति के ऊपर न्यौछावर हो रहेगी। उन के विलासों में साहस, उन के सौन्दर्य में सतीत्व, उनकी

अभिलाषाओं में देशानुराग और उनकी प्रत्येक चेष्टा में सिन्ध के जीवन की रक्षा का प्रश्न होगा।

देवकी—(उठो वीर भारत माता के, माँ ने तुम्हें बुलाया है गाते हुए जाते हैं।)

सूर्य—बहन, देखा तुमने देवकी और मधुआ को। ये लोग साधारण परिस्थिति के आदमी हैं। यदि प्रत्येक देश वासी में ऐसे विचार उत्पन्न हो जाँय तो अकेला सिन्ध प्रांत सारे संसार का सामना कर सकता है।

पर—पर बहन (दुख से) यदि ऐसा होता! मैंने सुना है कुछ बौद्ध और ब्राह्मण महाराज द्वारा लोहानों और जाटों को उच्चाधिकार दिये जाने पर बेतरह बिगड़ उठे हैं।

सूर्य—बहन, हमें इनसे भय नहीं है। इस भावी युद्ध में ये बौद्ध और ब्राह्मण लड़ने नहीं जायँगे, जायँगे केवल लोहान, जाट, गूजर तथा क्षत्रिय लोग। ईश्वर इन्हें सद्बुद्धि दे। परमाल, मुझे भय है कहीं ये लोग विद्रोह न कर बैठें। यदि ऐसा हुआ तो हमारा सारा सुखस्वप्न ओस के कणों की तरह ढल जायगा। हमारी सारी वीरता, बहादुरी और सैन्य संगठन धूल में मिल रहेगा। तब तो विधाता ही रक्षक है।

पर-–यदि महाराज ऐसे विद्रोहियों को बन्दी कर लें तो कैसा।

सूर्य–-यह असम्भव है। एक दो आदमी तो हैं नहीं। सारे प्रान्त में इस प्रकार के आदमियों का ज्ञान कैसे हो? महाराज भी तो निश्चेष्ट नहीं हैं। चलो हम अपने कर्तव्य का पालन करें।

(दोनों जाती हैं।)

पटपरिवर्तन

चौथा दृश्य

(देवल का राजप्रासाद। ज्ञानबुद्ध, सेन का राजा मोक्षवासव और उसके कुछ सहचर परस्पर बातचीत कर रहे हैं।)

ज्ञान—भाई मोक्षवासव, म इस बार दाहर को दिखला दूँगा कि ज्ञानबुद्ध शून्य की सम्पत्ति नहीं है, निकम्मे जीवन की धूलि नहीं है। इतना तिरस्कार, इतना अपमान? जयशाह ने भरी सभा में मेरा अपमान किया! अरवियों की क्रोधाग्नि में सिन्ध का प्रत्येक राजभक्त भस्म हो जायगा।

मोक्ष--भाई ज्ञानबुद्ध, आनन्द की रागिणी गाकर स्वतन्त्रता की वीणा बजाने वाले दाहर का अन्त समझो। उसकी प्रत्येक चेष्टाएँ मेरे विद्रोह की आग में स्फुलिङ्ग बन कर उड़ेंगी।। तुम्हारे कहने के अनुसार हम ने प्रत्येक बौद्ध और ब्राह्मण को दाहर के विरुद्ध कर दिया है। बौद्ध उपासक को बुलाकर भी मैं उसके द्वारा काम साधूँगा। लोहान, जाटों और गूजरों का पक्ष लेने के कारण मैंने उच्च जातियों को बेतरह भड़का दिया है। अब वे हमारे सहायक हैं।

ज्ञान—और मैंने इराक के सूबेदार से साँठगाँठ कर ली है, मैं उसे सहायता दूँगा। उसने मुझे अभयप्रदान

करते हुए देवल का राजा बनाना स्वीकार कर लिया है, समझे?

मोक्ष--और मैं?

ज्ञान—तुम तो अपने नगर के शासक रहोगे ही। मैं तुम्हारे लिये भी प्रार्थना करूँगा। अब आवश्यकता इस बात की है कि अन्त तक हम लोग दाहर पर यह भेद प्रकट न होने दें कि हमें उसके प्रति किंचिन्मात्र भी विद्वेष है।

मोक्ष—ठीक।

समुद्र—महाराज, जब बौद्धों का राज्य ही नहीं है तो फिर बौद्ध लोग उनके सहायक ही क्यों हों, अपना भला बुरा तो पशु भी पहचानते हैं हम तो फिर भी आदमी हैं। अरब के लोग इसबार आपके भरोसे पर ही आक्रमण करेंगे यह स्वयं हैजाज ने मुझ से कहा है।

मोक्ष—भाई, मुझे येन के अतिरिक्त कुछ अधिक देश की भी आवश्यकता है। सो तुम हैजाज़ से कह कर दिलवा देना। पीछे झगड़ा न हो।

ज्ञान—कैसी बातें करते हो! देवल और अलोर पर पूर्ण रूप से मेरा अधिकार होगा और ब्राह्मणाबाद और शिवस्थान पर तुम्हारा। हाँ, तुम अपनी ओर से दाहर से मिल कर युद्ध करने का समाचार भेज दो। और उसे

विश्वास दिला दो कि देवल पर आक्रमण के समय वह मानू के साथ रहेगा। मुझे मानू का डर है । वह किसी तरह भी काबू में आता नहीं दीखता। बड़ा निडर और सच्चा वीर है।

मोर—मानू को यहाँ से हटा देना होगा अन्यथा हमें सफलता की कोई आशा नहीं है।

ज्ञान—यह सब समय पर ही किया जायगा, इसका भी मैंने प्रबन्ध कर लिया है।

(बौद्ध सन्यासी का प्रवेश)

ज्ञान—(उठकर) जय हो, उपासक।

सागरदत्त—शान्ति लाभ हो। सुनाओ सूबेदार, मुझे क्यों बुलाया है? सुना है शत्रु फिर आक्रमण किया चाहता है।

ज्ञान—महाराज आप सम्पूर्ण विहार के अधिपति तथा बौद्ध धर्म के उपासक होकर भी शत्रु मित्र का भाव रखते हैं।

सागर—जो शत्रु हैं उन्हें शत्रु समझना विवेक है। पाप कभी भी पुण्य नहीं कहा जा सकता। जिस प्रकार आत्मा की उन्नति में बाधा पहुँचाने वाले राग द्वेष हमारी दृष्टि में सदा हेय हैं उसी प्रकार बौद्ध धर्म के विघातक ये अरबी भी हमारे शत्रु हैं। उन्हें मित्र कैसे कहा जा सकता है ज्ञानबुद्ध?

ज्ञान—भगवान् ने 'महानिर्वाणसूत्त' में आठ प्रकार के ध्यानों में विश्वमैत्री, विश्व के प्रति करुणा का भाव सिखाया

है। फिर महाराज, मनुष्य के प्रति ये भाव एक बौद्ध के हृदय में कैसे नहीं रह सकते?

सागर—उपासक, तुम भूलते हो। भगवान् का यह आशय कदापि नहीं। बौद्ध लोग मैत्री करुणा के उपासक हैं किन्तु जिन कामों से मैत्री नष्ट हो, करुणा के स्थान पर आतंक, अत्याचार घर कर लें उन्हें भी ठीक ठीक समझना होगा। हम लोग विश्वमैत्री किस धर्म से सीखे हैं, भगवान् बुद्ध से ही तो। सुनो, ये अरबी लोग हमारे द्वारा विश्वमैत्री और विश्वकरुणा के भाव सिखाये जाने पर भी बौद्ध धर्म का नाश किया चाहते हैं। मकरान प्रदेश में इन अरबियों ने निरीह बौद्धों का नाश किया। उनके विहार संघारामों को छिन्न भिन्न कर डाला, बलात्कार से बौद्धों को यवन बना डाला। इस प्रकार इन दुष्टों ने जब बौद्धों और बौद्धधर्म के नाश का बीड़ा उठाया है तब तुम्हीं बताओ इन से सुख शांति लाभ करने की आशा हम लोगों को कब हो सकती है?

ज्ञान—महाराज, फिर विश्व के प्रति मैत्री का भाव तो बौद्धों में न रहा। शत्रु मित्र उसकी दृष्टि में एक हैं। शत्रु बन कर यदि हम पर कोई अत्याचार करे तो भी क्या वह क्षम्य नहीं है महाराज?

सागर—विश्व के प्रति मैत्री का अर्थ है दुष्टों के प्रति दया दिखाना और दुष्टों की दुष्टता दूर करना। हमारी अहिंसा का अर्थ इतना ही है। हम मन, वाणी और कर्म से अहिंसा का उपदेश देते हैं उसका अर्थ यही है। जिस धर्म ने हमें ये भाव सिखाये हैं उसकी रक्षा करना क्या हमारा धर्म नहीं है?

मोद—पर महाराज, हिन्दू भी तो हमारे लिये वैसे ही हैं जैसे यवन। क्या बौद्ध धर्म से उनकी घृणा नहीं है, क्या वे बौद्ध और बौद्ध धर्म को कोई अच्छी दृष्टि से देखते हैं महाराज?

सागर—तुम भूलते हो भाई, हिन्दू धर्म बौद्धों का ही एक अंग है। धम्मपद के उपदेश हिन्दुओं के उपदेशों से भिन्न नहीं हैं। उनके उपनिषद् उनकी स्मृतियाँ और उन के वेद भगवान् के उपदेशों के सहायक हैं। भगवान् ने उन हिन्दूग्रन्थों के अर्थों में—जो उस समय के पण्डितों द्वारा विरुद्ध रूप से किये गये थे-विश्वास न करके उन अर्थों का त्याग किया! सर्वसाधारण के समझने योग्य भाषा में दृढ़ता पूर्वक मनन करके उन्हीं विचारों को 'धम्मपद' में स्थान दिया है। हम हिन्दुओं से भिन्न नहीं हैं ज्ञान!

ज्ञान—(बात बदल कर।) यदि हिन्दू राजा के बदले एक बौद्ध राजा को राज्य मिले तो आपके विचार में यह काम सर्वोत्तम होगा?

सागर—(उसी भोलेपन से) ठीक है, मुझे इसमें कोई आपत्ति नहीं, पर सूबेदार, अब यह सम्भव नहीं है। मुझे डर है कि बौद्ध लोग अपने राज्य की लालसा में इन अधिकारों से भी कहीं हाथ न धो बैठें।

ज्ञान—तो क्या आप इस आगामी युद्ध में बौद्धों के उसमें भाग लेने के पक्ष में हैं ?

सागर—उसी तरह जिस तरह आत्मा की उन्नति के मार्ग में आने वाले राग, द्वेष, मद, मात्सर्य और कपट की बाधाओं को दूर करने में बाधक ?

मोक्ष—तब हम लोग इस में भाग लेंगे। आप को केवल इसीलिए कष्ट दिया गया है कि इस समय हम बौद्धों को मार्ग दिखला कर कृतार्थ करें।

सागर—भाई कल्याण लाभ करो। परन्तु स्मरण रहे कि विद्रोह सब से बड़ा विघातक शत्रु है। मैंने भी तो सिलघन नामक शरीर से बड़े बड़े महापातक और हत्याएँ की है। मैं उस समय भगवान् से द्रोह करता था। इसी प्रकार भूल चूक होने पर भी मनुष्य समय पर सावधान होकर मनुष्यत्व, व्यक्तित्व के उच्च सिंहासन पर बैठ सकता है। झूठे भ्रम और अनर्थकारी धारणाएँ व्यक्ति के विकास में बाधक शक्तियाँ हैं। इन्हें छोड़ो और सच्चे रूप से दाहर

भीतर एक रहकर बौद्ध जीवन के उत्कृष्ट आदर्श बनो। अच्छा, अब हम जाते हैं। (जाता है।)

ज्ञान—बुड्ढा बड़ा खुर्राट निकला। इससे काम बनने की आशा नहीं है। हमने सोचा था, इसका आदेश लेकर प्रान्त के समस्त बौद्धों को युद्ध के विरुद्ध उत्तेजित किया जाय।

मोच—पर उसने अन्त में जो कुछ कहा, वह बात मेरे हृदय में जैसे बार बार चोट करती है। 'परन्तु स्मरण रहे कि विद्रोह सब से बड़ा विघातक शत्रु है।'

ज्ञान—अरे भोले भाई, ये बातें राजनीति के लिये नहीं हैं। साधारण गृहस्थी ही इन बातों पर विश्वास कर सकते हैं, हम नहीं।

मोच—हाँ और क्या? राज्य प्राप्ति की आशा में ये चोटें उतनी उत्तेजक नहीं हैं।

ज्ञान—आज ही वेन पहुँच कर तुम महाराज को अपनी पूर्ण तैयारी की सूचना भेज दो।

मोच—ठीक है। (जाते हुए) 'परन्तु विद्रोह सब से बड़ा विघातक शत्रु है' ओह ये शब्द कितने भयकर हैं! किन्तु यह हमारे लिये नहीं है।

ज्ञान—गाता हुआ जाता है —

/ हे आशा, अब मत मचल, पूर्णता सरक रही है

उठ साहस का दे साथ, भावना बहक रही है
भर भर कर उत्कट राग, हृदय को समझा लेना
तू खेल द्रोह से फाग, प्रेम मत घुसने देना
हे आशा, अब मत मचल, साधना सरक रही है
उठ साहस का दे साथ, भावना बहक रही है

पटपरिवर्तन

पाँचवाँ दृश्य

(मकरान के मैदान में मुहम्मदबिनकासिम की छावनी पड़ी है, वह शिविर में अपने सहायक अबुलमलिक के साथ बैठा बातें कर रहा है)

मुहम्मद—भाई अबुल, इस बार अगर खुदा ने चाहा तो मय व्याज के बदला लूँगा। मेरे मालिक हैजाज ने कृपा करके मुझे यह अवसर दिया है। हर पड़ाव पर पहुँचते ही उनके उपदेश मिलते हैं। जानते हो उन्होंने मुझे इस पड़ाव पर आते ही क्या नसीहतें भेजी हैं?

अबुल—क्या महाशय?

मुहम्मद—उन्होंने कहा है कि छः हज़ार ऊँटों के अतिरिक्त तीन हजार ऊँट तुम्हारे पास और भेजे जा रहे हैं, जिनमें सारा सामान रहेगा। हर चार घुड़सवारों का सामान एक ऊँट पर लादा जाय। मैदान में डेरा डालना। खुदा से डरना। धीरज सब से बड़ा भूषण है। लड़ाई के समय अपनी सेना के विभाग कर लेना। शत्रु पर चारों तरफ से हमला करना। छः दर्जी भी सामान तैयार करने के लिये भेजे हैं। मकरान से मुहम्मद हारून को अपने साथ ले लेना।

अबुल—मेरे मालिक, इस बार आप ज़रूर जीतेंगे। हमारे अरबी ज्योतिषियों ने सितारों की चाल देख कर कहा था कि 'इस बार फतह ज़रूरी है।'

मुहम्मद—फतह, फतह ऐसी कि एक भी शत्रु को जीता न छोड़ूँगा। आग सी बरसेगी। एक तरफ तलवार होगी और दूसरी तरफ होगी खलीफा की आज्ञा। या इधर या उधर।

(दरबान का प्रवेश)

दरबान—हुज़ूर, मकरान के सेनापति श्रीमान् मुहम्मद हारून आ रहे हैं।

मुहम्मद—आने दो (आगे जाकर हारून का स्वागत करता है।) आइये महाशय, आदाब अर्ज़।

हारून—(लपक कर) मेरे बहादुर सेनापति, तसलीम।

(दोनों एक दूसरे से लिपट जाते हैं।)

मुहम्मद—सुनाओ सरदार, तैयार हो न ?

हारून—तैयार ? क्या इसमें भी कोई शक है ? मेरी चार हज़ार फौज भी तैयार है। इस बार दुश्मनों को आटे दाल का भाव मालूम होगा। शत्रु का सब साहस मेरी विजय के समुद्र में विलीन हो जायगा।

मुहम्मद—खुदा ने च

हारून—खुदा ने चाहा है तभी तो तुम्हारे जैसे वीर, बहादुर जंगजू को उसने काफिरों पर हमला करने भेजा है।

मुहम्मद—अभी मैं अपनी सेना की क़वायद देखना चाहता हूँ, अच्छा हो आपकी सेना भी वहीं आ जाय।

हारून—जो हुक्म। अब्दुर्रहमान, अपनी सारी सेना को बुलाओ।

अब्दुर्रहमान—जो हुक्म (जाता है।)

हारून—जनाब, अगर मंजूर हो तो आज रात को मेरे यहाँ ही मुजरा देखा जाय, शराब उड़े ?

मुहम्मद—मुजरा, भाई हारून क्या कहते हो ? क्या यह मुजरा देखने और शराब पीने का समय है ? मेरे दिल में देश प्रेम की नदी लहरा रही है, शत्रु का ध्यान आते ही गुस्से से आँखें फटी पड़ रही हैं। और तुम्हें मुजरा और शराब सूझी है। नहीं भाई हारून, इस काम का यह अवसर नहीं है। अब तो बहादुरी के राग गाओ। अरबियों को पुरानी लड़ाइयों के ज़िक्र सुनाओ। जैसे उस रोज हरा में आयशा के नौकर के नाद से संसार काँप उठा था। आज उसी की कृपा से सिन्ध काँप उठेगा। जल और थल खलीफा के आकार और प्रकार के बन कर सिन्ध में एक नया जीवन डाल देंगे। आज हमारे ऊपर दुश्मनों ने जो अत्याचार किये

हैं, उनका बदला लेने के लिये हर एक बहादुर सिपाही को लड़ने, मरने और कटने के लिये तैयार कर दो। तुम्हें मालूम है हजरत खलीफा ने शराब की मनाही कर दी है।

हारून—मेरे बहादुर सिपहसालार, यह सिर्फ मैंने तुम्हारे मन का भाव जानने के लिये कह दिया था। तुम वाक़ई बड़े बहादुर हो। आज तुम इस इम्तहान में पास हुए। हैजाज ने सिर्फ तुम्हारी परीक्षा के लिये यह संदेश भेजा था। उसी के मुताबिक मैंने तुमसे कहा था। लेकिन अब मुझे पूर्ण विश्वास है तुम विजयी होगे।

मुहम्मद—हारून, बहादुरी और ऐश ये दोनों एक दूसरे के विपरीत हैं। ऐश करने वालों ने कभी राज्य नहीं किया। जिस फौज में ऐय्याशी घुस गई, वह कभी अपनी हकूमत ठीक ठीक नहीं रख सकती। तुम्हें मालूम है, पहले अरबी लोग शराब, औरत और आपस की लड़ाई में तबाह हो गये। नहीं भाई, अब हम लोगों का निशाना दूसरा है। हारून, मुहम्मद अब भारत को खलीफा का राज्य बना कर ही [illegible]गा या वहीं इसकी क़ब्र बनेगी।

हारून—बेशक, बेशक! चलिये समय हो गया।

मुहम्मद—हाँ चलो (सब जाते हैं।)

पटपरिवर्तन

छठा दृश्य

(दो अरबी सैनिक मकरान के पड़ाव में बातें कर रहे हैं ।)

अनफ़—(मज़ाक में) रशीद, ओ रशीद ! अबे रशीद के बच्चे, जरा इधर सुन ।

रशीद—चुप बे उल्लू । जरा भी आराम नहीं करने देता ।

अनफ़—अबे अब आराम करने का मौक़ा है या लड़ने का ? देख, सिपहसालार हम लोगों की क़वायद देखना चाहते हैं । चल, चलें ।

रशीद—यहाँ तो चलते चलते थक कर चूर हो गये, तुझे क़वायद की पड़ी है !

अनफ़—अबे सुन, (नगाड़े की आवाज़ की तरफ़ इशारा करके) सुन, यह क्या हो रहा है ?

रशीद—अब चाहे नगाड़ा बजे या कुछ, मुझ से तो अब कवायद हो न सकेगी भाई !

अनफ़—क़वायद न हो सकेगी ! तो यहाँ क्या सिर मुँड़ाने आया था ?

रशीद—अबे ! आज बीस रोज़ से बराबर चलते आ रहे हैं, पिण्डलियाँ बैठी जा रही हैं, धूप के मारे चाँद के बाल

उड़े जा रहे हैं, होठों पर पपड़ियाँ पड़ गई हैं और सेनापति को कवायद की सूझी है।

अनफ़--तुझे मालूम है जब हैजाज़ ने स्याम से फौजें बुलाई थीं और उनमें हरएक रँगरूट से लड़ने की तैयारी के बाबत पूछा तो उनमें से एक फौजी ने हैजाज से क्या कहा था ?

रशीद—हाँ, क्या कहा था ?

अनफ़—उसने कहा कि मैं इस लड़ाई में नहीं जाना चाहता, मेरे बीवी बच्चे छोटे हैं।

रशीद—क्या खूब, बीबी छोटी और बच्चे भी छोटे !

अनफ़—उसका मतलब शायद बच्चों से था, बीबी से नहीं।

रशीद--अच्छा, फिर हैजाज ने क्या जवाब दिया ?

अनफ़—उसने चिल्ला कर कहा, दूर हो पाजी ! यहाँ से अपना मुँह काला कर जा !

रशीद—फिर क्या हुआ ?

अनफ़—जैसे ही वह हैजाज के सामने से हटा वैसे ही एक फौजी ने इस बेहूदगी पर उसका सिर काट डाला।

रशीद—अरे बापरे ! इतना ग़जब !

अनफ़--सो मियाँ, नूँनच न करना नहीं तो वही हाल होगा।

रशीद--अबे, हमें यहाँ लड़ने के लिये लाया गया है, मरने तो हम यहाँ नहीं आये! जब तबियत ठीक होगी, दिल में चैन होगा, तभी तो लड़ा जायगा?

अनफ़--अरे भोले भाई, लड़ाई में तबियत का क्या सवाल? वहाँ तो एक खजर इधर और एक खजर उधर। और कहीं दुश्मन ने इधर खजर रसीद कर दिया तो बेड़ा पार।

रशीद--सचमुच?

अनफ़--इसमें भी कुछ शक है?

रशीद--भाई, मैंने तो सुना था कि लड़ाई में खूबसूरत औरतें और माल मिलता है, मैं तो इसी लिये आया हूँ।

अनफ़--ठीक है, औरतें भी और माल भी, पर लड़ाई के बाद।

रशीद--तो क्या कोई तरीक़ा ऐसा नहीं है कि जाते ही मिल जाय, अगर ऐसा हो सके तो मैं उसी वक़्त छिप कर लौट पड़ूँ। (नगाड़े की आवाज़ फिर सुनाइ देती है)।

अनफ--पहले क़वायद तो करो, फिर औरतों की बातें करना।

रशीद--हाँ चलो, क़वायद तो करनी ही होगी। यह क़वायद भी कैसी बुरी बला है। भला क़वायद में होगा क्या ?

अनफ़—जमा जमा कर कदम रखने होंगे, बिगुल के साथ चलना होगा, दौड़ धूप, खंजरों की चमक, तलवारें कभी ऊपर कभी नीचे।

रशीद—या खुदा तब तो औरतें लाने में पहले दिक़्क़तों का सामना ही है।

अनफ—दिक़्क़तों का क्या, मौत का सामना है, चलो।

(दोनों जाते हैं।)

पटपरिवर्तन

———

सातवाँ दृश्य

(महाराज दाहर युद्धगृह में बैठे मंत्रणा कर रहे हैं। युवराज जयशाह, मंत्री प्रभाकर, वीर मानू आदि कई अन्य विश्वस्त कर्मचारी बैठे हैं।)

दाहर—तो क्या जयशाह, तुम्हें अलाफी पर सन्देह है ?

जयशाह—पृथ्वीनाथ, सन्देह ! मैं जानता हूँ उस दिन इतनी प्रतिज्ञा करने पर भी अलाफी अवसर पर हमारा साथ न देगा। कहीं उसके कारण हमें हाहाकारमय पराजय का मुँह न देखना पड़े।

दाहर—परन्तु मैं तो उसके मुख पर छल अथवा सन्देह का कोई चिन्ह नहीं देखता।

प्रभाकर—संसार में विश्वासघात के भाव इतने दुरूह और गुप्त हैं कि उनको जानना मानव शक्ति से बाहर है। आँधी के आसार घुमस से ही जाने जाते हैं। मुझे सन्देह है कदाचित् उसका आपकी शरण में आना भी लक्ष्य रहित नहीं है।

मानू—सम्भव है।

दाहर—अच्छा, तो बुला कर उसके भावों का तारतम्य क्यों न मालूम कर लिया जाय ?

युवराज—जैसी पिता जी की इच्छा, किन्तु मैं सर्प पर कभी विश्वास नहीं कर सकता।

दाहर—मंत्रिन्! अलाफी को बुलाओ।

मन्त्री—जो आज्ञा। (बाहर जाता है।)

युवराज—महाराज लगभग तीस हजार सैन्य संगठन हो चुका है प्रत्येक नगर में युद्धसामग्री प्रस्तुत है, इतना होते हुए भी यदि कुछ और सैन्यसंग्रह हो जाय तो अच्छा है।

दाहर—हाँ युवराज, तीस हजार सेना के अतिरिक्त प्रति दिन लगभग एक सहस्र सेना और प्रस्तुत की जा रही है। सूर्य की अध्यक्षता में यह कार्य हो रहा है।

मानू—पृथ्वीनाथ! शिवस्थान का सामन्त वत्सराज, युवराज और मेरी सेना यदि शत्रु से आगे बढ़ कर युद्ध करे तो कैसा ?

दाहर—नहीं मानू, मैं देवल से बाहर तुम्हें नहीं जाने देना चाहता। वत्सराज और रसिल युवराज के साथ होंगे। मोक्षवासव ने उस दिन आकर मुझ से क्षमा याचना की थी। मैंने उसे क्षमा कर दिया है, किन्तु मैं बिना अधिक आवश्यकता के उसे युद्ध में न जाने दूँगा, वह मेरे पास रहेगा। आह, यदि कहीं ज्योतिषियों ने मेरी यात्रा का परामर्श दिया

होता ! किन्तु नहीं वीरो, मैं आवश्यकता पड़ते ही प्रस्थान करूँगा ।

(अलाफ़ी का प्रवेश)

अलाफी—सिन्धनरेश की जय हो । मुझे क्या आज्ञा है ?

दाहर—अलाफ़ी, कर्तव्य की क्रूर परिस्थिति से प्रभावित होकर मनुष्य शत्रु और मित्र को एक सा देखता है । उसी के उपायों में एक व्यवस्था यह भी है कि शासक शत्रु और मित्र को पहचाने ।

अलाफी—महाराज, परिस्थितियाँ ही विचारों में तारतम्य और उनकी उत्पत्ति और विनाश का कारण है ।

युवराज—अलाफी, देश प्रेम के स्वार्थ में आहुति देने वाले पक्षी भी कभी कभी उसी वृक्ष का विनाश करने के लिए कटिबद्ध होते देखे गये हैं जिसने उनकी रक्षा की है ।

अलाफी—ऐसे समय उनका कर्तव्य है कि मुख्य कर्तव्य की साधना में गौण का नाश कर दें ।

दाहर—यदि पालक पर शरणागत के बान्धव आक्रमण करें तो शरणागत का उस अवस्था में क्या कर्तव्य होता है अलाफी !

अलाफ़ी- परिस्थितियाँ और कर्तव्य जो कहें वही तो महाराज !

युवराज—उस अवस्था में प्रतिपालक का क्या यह कर्तव्य नहीं है कि शरणागत पर ध्यान रखे।

अलाफी—युवराज, आज एक मास से मैं इसी पर विचार कर रहा हूँ, किन्तु मैं अभी तक किसी नतीजे पर नहीं पहुँच सका।

दाहर—तुम ऐसी परिस्थिति में किस कर्तव्य का पालन करोगे, आर्यशास्त्र और आर्य गौरव सर्वस्व लुटा कर भी शरणागत की रक्षा का उपदेश देता है।

अलाफी—महाराज, आप धन्य हैं, आप का शास्त्र भी महान् है किन्तु छल और कूट युग में ।

मंत्री—उस शास्त्र की व्यवस्था केवल वैसे ही व्यक्तियों के लिये है महाराज, परिस्थिति शास्त्र की स्थिति का सब से बड़ा तर्क है ?

अलाफी—मैंने आप की दया और कृपा के पावन उपदेशों से यह सार ग्रहण किया है कि मैं देश और जाति के सम्मुख विश्वासघात न कर के प्रतिपालक के प्रति अपनी असमर्थता प्रकट करते हुए देश छोड़ दूँ।

युवराज—तुम्हारे आने से पूर्व मेरा इस सम्बन्ध में यही निश्चय था।

दाहर—कर्तव्य की प्रेरणा से बाध्य हो कर मैं तुम्हें

आज्ञा देता हूँ कि तुम मेरा प्रान्त छोड़ कर शीघ्र ही चले जाओ।

अलाफ़ी—मैं इस कृपा का बहुत आभारी हूँ। मैंने आप के राज्य में बहुत सुख पाये हैं इस लिये यह अलाफी आपका चिरऋणी है।

(प्रणाम करके जाता है)

जयशाह—फिर न चुभने के डर से यदि काँटे को समूल भस्म कर दिया जाय तो वह कभी कष्ट नहीं देता।

दाहर—अभय प्राप्त मनुष्य के प्रति जो व्यवहार शास्त्रों ने बताया है वही म ने किया है युवराज! मैंने जिसे एक बार 'अभय' कह दिया, वह सदा अवध्य है।

सब—धन्य हो महाराज, जय हो सिन्ध नरेश की।

जयशाह—(मानू से इशारा करता है, मानू महाराज की आज्ञा लेकर बाहर चला जाता है।) (दाहर से) पिता जी, मेरा विचार है शत्रु देवल पर ही प्रथम आक्रमण करेगा यदि आप उस समय युद्ध को देखने के लिये देवल में रहें तो—

राजज्योतिषी—नहीं युवराज, महाराज का अलोर न छोड़ना ही श्रेयस्कर है।

दाहर—(सोच कर) ज्योतिषी जी, आप ने बड़ी बुरी व्यवस्था दी है, देश में इस समय आग लग रही है, शत्रु -

ज्योतिषी—नहीं, कभी नहीं। अच्छा आज्ञा दीजिये। (जाता है)।

ज्ञान—सब सामग्री प्रस्तुत है, आग लग जाने भर की देर है। दाहर का सब कुछ भस्म हो जायगा। मोक्षवासव को भी मैंने बहका ही दिया है। अवसर पाते ही मैं अरबियों को पृष्ठद्वार से बुलाकर जयशाह, मानू और रसिल का नाश कराऊँगा। अहा! वह कैसा शुभ दिन होगा, जब अलोर और देवल का मैं एकच्छत्र राजा बनूँगा। उस स्वप्न की अनुभूति मुझे कितना सुख देती है। राज्य के वैभव को याद करके मेरा हृदय बल्लियों उछल रहा है। खुशी से गाता है :—

इस स्वप्न सुख भवन में मन मस्त हो उठा है
निस्तब्धता में जग की आनन्द सो उठा है
मेरी हृदय विपञ्ची झनकार कर रही है
आशावरी सुनाती, आलाप की छटा है
मुसका रहा है सूरज संकेत कर विजय का
जीवन की निर्झरी में मन मोद आ डटा है
कोकिल की कूक में है उल्लास की मधुरिमा
मेरी तरफ़ निरखती, रिपु पर चढ़ी घटा है

सुन्दर समीर चलकर सौरभ मचल मचल कर
मग भाग्य गन्ध कण को देते निठुर हटा हैं
विद्रोह से विजय पा अठखेलियाँ करूँगा
मन मुग्ध हो रहा है अब भाग्य या रहा है

पटाक्षेप

ज्योतिषी—नहीं, कभी नहीं। अच्छा आज्ञा दीजिये। (जाता है)।

ज्ञा—सब सामग्री प्रस्तुत है, आग लग जाने भर की देर है। दाहर का सब कुछ भस्म हो जायगा। मोक्षवासव को भी मैंने बहका ही दिया है। अवसर पाते ही मैं अरबियों को पृष्ठद्वार से बुलाकर जयशाह, मानू और रसिल का नाश कराऊगा। अहा! वह कैसा शुभ दिन होगा, जब अलोर और देवल का मैं एकच्छत्र राजा बनूँगा। उस स्वप्न की अनुभूति मुझे कितना सुख देती है। राज्य के वैभव को याद करके मेरा हृदय बल्लियों उछल रहा है। खुशी से गाता है :—

इस स्वप्न सुख भवन में मन मस्त हो उठा है
निस्तब्धता में जग की आनन्द सो उठा है
मेरी हृदय विपञ्ची झनकार कर रही है
आशावरी सुनाती, आलाप की छटा है
मुसका रहा है सूरज संकेत कर विजय का
जीवन की निर्झरी में मन मोद आ डटा है
कोकिल की कूक में है उल्लास की मधुरिमा
मेरी तरफ़ निरखती, रिपु पर चढ़ी घटा है

सुन्दर समीर चलकर सौरभ मराल मचल कर
मम भाग्य गन्ध कण को देते निठुर हटा हैं
विद्रोह से विजय पा अठखेलियाँ करूँगा
मन मुग्ध हो रहा है अब भाग्य आ रहा है

पटाक्षेप

नवाँ दृश्य

(युवराज जयशाह देवल के बाहर शिविर में)

जयशाह—सब कुछ प्रस्तुत है। विस्फोट में चिनगारी की आवश्यकता है। आज विलास की चिता में वीरत्व की अग्नि जला कर शत्रु को भस्म कर डालूँगा। (सोच कर) अलाफी, तुम बड़े धूर्त निकले। पर मैंने भी तुम्हारी यथार्थ व्यवस्था कर ही दी। तुम्हारा पूर्ण रूप से सत्कार कर दिया है। अब अलोर के दुर्ग में अपराधी की भाँति तुम्हें पड़ा रहना होगा। पर मुझे ज्ञानबुद्ध से बड़ा डर है। (सोच कर) नहीं उसके पास अब कुछ भी नहीं है, वह कर ही क्या सकता है। राजज्योतिषी गुप्तचर के रूप में उसके पास है ही।

(मानू का प्रवेश)

मानू—जय हो युवराज की।

जयशाह—आओ भाई, सुनाओ शत्रु का क्या समाचार है?

मानू—युवराज, चरों से ज्ञात हुआ है कि शत्रु आया ही चाहता है। सुना है बड़ी विशाल सेना है।

जयशाह—इस बार अन्तिम युद्ध है। या तो सिन्ध पर महाराज का शासन होगा अथवा विनाश की क्रूर ज्वालाओं में प्रान्त की आहुति होगी। तुम्हारे वीरों का क्या हाल है ? मानू, जिस प्रकार डाकू जीवन में तुमने नृशंसता, निर्दयता, क्रूरता, कठोरता के नियमों की, जो डाकू जीवन के अंग हैं, रक्षा की है, आज उसी दस्युता के सहारे रुधिरसनी पुष्करिणी के सरोज बन कर अपनी वीरता और शौर्य के मकरन्द से समस्त सिन्ध रूप भ्रमर को चंचल कर दो।

मानू—युवराज, निश्चिंत रहिये। संसार में जितनी क्षमता है, मनुष्यत्व में जितना विश्वास है, उसको समग्ररूप से एकत्रित कर के मैं कह सकता हूँ कि मेरे रहते शत्रु के जीवन की झाँई सिन्ध पर न पड़ने पावेगी। जन्तु जगत् में जिस प्रकार शेर का पंजा, जिराफ का खुर और ह्वेल की दुम है, उसी प्रकार इन तीन भयंकर अंगों के समान, जो प्रकृति ने अपनी उग्रता से सृजन किये हैं, मैं भी मनुष्य सृष्टि की उग्रता को लेकर विजय की खोज करूँगा।

जयशाह—ठीक है, मुझे तुमसे ऐसी ही आशा है। सेना की क्या अवस्था है ?

मानू—युवराज, मेरी सेना प्रस्तुत है, आज्ञा की देर है

(दूत का प्रवेश)

दूत—सेनापति, शत्रु आगया है उसकी सेना ने यहाँ से दस कोस पर छावनी डाली है।

युवराज—मानू, हमें आगे बढ़ कर शत्रु से मोर्चा लेना चाहिये।

मानू—ठीक है। (दोनों का प्रस्थान)

पटाक्षेप

दसवाँ दृश्य

(एक गाँव में सूर्य और परमाल देवी गाँव के लोगों को एकत्र करके उत्साहित कर रही हैं।)

उनमें से एक आदमी—तुम्हारा उपदेश सही है, पर अभी उस दिन मानयुद्ध के आदमियों ने तो हम से कहा था कि युद्ध में कोई न जाय।

सूर्य—हैं! (आश्चर्य से) मानयुद्ध देश का कृतघ्न कीड़ा है। उसने महाराज के साथ विश्वासघात करके केवल शत्रुओं के हाथों सौंप दिया है। क्या तुम लोग ऐसे पापी की बातें सुनोगे?

प०—बहन, क्या दुष्ट मानयुद्ध ने यहाँ तक कृतघ्नता की है?

सूर्य—(परमाल की बात अनसुनी करके) तुम्हारे देश पर विपत्ति आई है। एक विदेशी तुम पर आक्रमण करने आ रहा है। जिसके वृक्षों की छाया में तुमने विश्राम किया है, जिस देश का तुमने अन्न खाया है, जिस माता की गोद में तुम इतने बड़े हुए हो, क्या उसके लिये जान लड़ा देना तुम्हारा कर्तव्य नहीं है?

एक—हम लड़ेंगे और सिन्ध के लिये सर्वस्व न्यौछावर कर देंगे।

दूसरा—है तो ठीक, पर हमतो राजा होने से रहे। महाराज दाहर राजा रहे तो भी हम प्रजा ही रहेंगे, यदि कोई दूसरा राजा होगा तब भी हम प्रजा ही रहेंगे।

तीसरा—अरे मूर्ख, प्रजा की रक्षा करना जैसे राजा का धर्म है ठीक उसी प्रकार आपत्ति में राजा की रक्षा करना भी प्रजा का धर्म है।

सूर्य—यह राजा की रक्षा का प्रश्न नहीं है। राजा तुम से अपनी रक्षा नहीं चाहता। वह तुम्हारे देश से शत्रुओं को भगाना चाहता है जो तुम्हारे धर्म पर, तुम्हारे आचार पर, तुम्हारे गौरव पर, तुम्हारी प्राचीनता पर हाथ फेरना चाहता है। शत्रुओं ने मकरान के मन्दिर तोड़ डाले, विहार छिन्नभिन्न कर दिये, शहर लूट लिया, स्त्रियों, बच्चों और पुरुषों को पकड़ पकड़ कर मार डाला, क्या यहाँ भी तुम्हें ये बातें स्वीकार हैं?

सब—नहीं, कभी नहीं, हम लोग सिन्ध की चप्पा चप्पा भूमि के लिये, मन्दिर की एक एक ईंट के लिये, विहार की एक एक पुस्तक के लिये, आर्यगौरव की एक एक कहानी के लिये

मर मिटेंगे। माता जी, हम सब युद्ध के लिये तैयार हैं। आज्ञा दीजिये।

स्त्रियाँ—हमें भी आज्ञा दीजिये कि हम अपने पति, भाइयों और बच्चों के साथ युद्ध में भाग ले सकें।

सूर्य—(पुरुषों से) तुम लोग यदि मरने को तैयार हो तो अभी अलोर जाकर महाराज की सेना में भर्ती हो जाओ। (स्त्रियों से) तुम परमाल की अध्यक्षता में युद्ध में घायल सिपाहियों की सेवा करो और देश का मुख उज्ज्वल करो।

सब—जय हो महाराज दाहर की, जय सिन्ध देश की।

(जोश में जाते हैं।)

पटाक्षेप

चौथा अंक

पहला दृश्य

(युद्धवेश में महाराज दाहर दुर्गद्वार के शिखर पर उद्विग्नता से टहल रहे हैं, मन्त्री, मोक्षवासव आदि कुछ कर्मचारी पास खड़े हैं।)

दाहर—अभी रणपरिणाम का कोई सन्देश नहीं मिला, मन्त्री जी, देखो कोई आया ?

मन्त्री—(आगे बढ़ कर देखता है फिर लौट कर) नहीं महाराज कोई नहीं आया।

दाहर—(उद्विग्नता से तूणीर चटचटाने लगता है) अब भी कोई नहीं क्या ? इतनी देर, आज प्रात काल से प्रतीक्षा के वक्ष स्थल पर बैठा हुआ आशा निराशा के टॉके तोड़ रहा हूँ। मेरी हथिनी चिंघाड़ कर युद्ध के लिये उतावली हो रही है। मेरी सेना रणोन्माद का मद पीकर विकट ध्वनि कर रही है। मोक्षवासव कहाँ है ?

मोक्ष—आज्ञा, पृथ्वीनाथ !

दाहर—भाई, अब मुझ से नहीं रहा जाता। अब देर न करो। मैं स्वयं जाकर युद्ध करूँगा। प्रस्थान करो। इस समय मुझे कुछ नहीं दीखता। युद्ध, युद्ध, बस यही एक मेरी गति है।

(दूत का प्रवेश)

दूत—महाराज, रक्षा कीजिये, शत्रु ने देवल पर आक्रमण कर दिया, सब कुछ नाश होगया।

रत्नाकर—हे प्रभो !

दाहर—कैसे ! कैसे ! शीघ्र कह।

दूत—युवराज, मानू और वत्सराज ने दिन भर युद्ध करने के बाद शत्रु को परास्त कर दिया था। रात्रि के समय दोनों ओर से युद्ध स्थगित कर दिया। सब लोग लौट आये थे, किन्तु आधी रात के समय देवल के मार्ग से एकदम भयंकर नाद सुनाई दिया। उसी अन्धकार में घोर युद्ध हुआ। चारों ओर शत्रु ही शत्रु थे। इस युद्ध में वत्सराज देवगति को प्राप्त हुए।

दाहर—हा वत्सराज !

दूत—पीछे से ज्ञात हुआ कि ज्ञानबुद्ध ने दक्षिण द्वार से अरबियों को भीतर बुला लिया। मानू की सेना ने डट कर लड़ाई की। इस समय देवल पर शत्रु का राज्य है।

दाहर—विश्वासघात, मनुष्यता के मुख पर कलंक लगाने वाला विश्वासघात ! मंत्री युद्ध की यात्रा करो।

(एक और दूत का प्रवेश)

दूत—जय हो महाराज की, शत्रु अलोर की ओर

बढ़ रहा है। मुहम्मदबिनक़ासिम ने ज्ञानबुद्ध को क़ैद कर लिया है। सुना है शत्रुओं ने नगर के मन्दिर, विहार, और संघाराम तोड़ डाले हैं।

दाहर—इतना काण्ड हो गया, (क्रोध से) जा, मैं स्वयं युद्ध के लिए प्रस्थान करूँगा। आज क्षत्रियत्व के विकास द्वारा, धनुर्दण्ड की टंकार द्वारा, पराक्रम के प्रकाण्ड ताण्डव द्वारा अरबियों को नए शासन, नए विधान और नई युद्ध-कला का पाठ पढ़ाऊँगा। कृतघ्नता के क्रूर अग्निकुण्ड में नर रक्त रंजित विभीषणों की आहुति दूँगा अथवा स्वयं मृतप्राय मातृभूमि के वक्ष स्थल पर गिर कर स्वर्गलाभ करूँगा। मन्त्री, प्रासाद की स्त्रियों को युद्ध और मृत्यु के लिये तैयार होने की सूचना दे दो।

मन्त्री—जो आज्ञा! (जाता है)

मोक्ष—महाराज, ज्योतिषियों ने आपका नगर त्याग निषेध कर दिया है।

दाहर—सब कुछ नाश होने पर निज शुभ की आशा करना मूर्खता है। देश की विनाशिनी घड़ियों में व्यक्तित्व की रक्षा नहीं हो सकती, मोक्षवासव! अब मैं जाऊँगा। मेरा जाना आवश्यक है, हा, कदाचित् इस समय से पूर्व ।?

(प्रस्थान करते हैं)

पटाक्षेप

दूसरा दृश्य

(युवराज जयशाह निरुण के वन में क्षतविक्षत अवस्था में।)

दुःख से अधीर हो कर—

गीतों में स्वर भंग, हृदय में भय किस ने भर डाला
भव्यभक्ति में द्रोह, राग में निर्विषयों की ज्वाला
वीर भाव में दैन्य, प्रेम में अनबन कैसी आई
विद्याओं में वञ्चकता ने छलकाई फैलाई
घोल क्षार सागर में किसने उसका मद मथडाला
स्वतन्त्रता में पारतन्त्र्य विष घोला कुत्सित काला
राजनीति में क्यों उठ उसने क्रांति थपेड़ लगाई
निर्मल पुष्करिणी में हे विधि, क्यों पैदा की काई
स्निग्धहृदय को है निर्दय, क्यों रह रह पीस रहा है
सब कुछ छिपा नाश की तह में, दुख क्यों टीस रहा है?

सर्वस्व स्वाहा हो गया। विनाश, ध्वंस, प्रलय के अकाण्ड अट्टहास में निराशा के वह्निकुण्ड में, विश्वासघात के कुत्सित चक्र में, हिन्दुत्व का हृदय, बौद्धधर्म की शान्ति, आर्य इतिहास का गुरुत्व, धर्मशास्त्रों की महत्ता, प्राचीनता, सु-

संस्कृति की सुरभि सदा के लिये विलीन हो गई। स्वतन्त्र रूप से विचरण करनेवाले निरीह पक्षियों के घोसलों में विधाता ने विद्रोह की वह्नि बिखेर कर आग लगा दी। हा! पिता जी सिन्ध के तट पर युद्ध में मारे गये। मोक्ष वासव, (दाँत पीस कर) उस नीच, नराधम, कृतघ्न, मोक्षवासव ने येन के मार्ग से बेड़े द्वारा शत्रुओं को बुला लिया। युद्ध स्थल में पूर्व ही से विस्फोटक पदार्थ बिछवा दिया गया था। उसी नीच ने अवसर पाकर उसमें भी आग लगा दी। महाराज तथा अन्य सैनिकों के हाथी और अश्व इस अकाण्ड अग्नि विस्फोट से बिगड़ खड़े हुए। पिताजी की हथिनी बहुत रोक थाम करने पर भी उन्हें सिन्ध में ले गिरी। मोक्षवासव ने नीच मल्लाहों की सहायता से अरबी सेनापति को बुला लिया। तट घेर लिया गया। और अन्त में वही हुआ। हा पिता जी का सिर । छापाकर भी पकड़ लिया गया। हा, विद्रोही वृत्ति ने निज जीवन से विद्रोह क्यों न किया! मैं अब मैं भी सेना हीन, सहायता हीन हो गया हूँ। शत्रुओं ने सब प्रदेश पर अधिकार कर लिया।

(घावों की पीड़ा से कराह कर मूर्छित हो जाते हैं, फिर होश में आकर और सामने की ओर देख कर) हूँ! कौन है जो इधर दौड़ा आ रहा है? (देखते देखते वह आदमी पास आ जाता है) अहा, मानू तुम कैसे? कहा भाई—

मानू—(हाँपता हुआ) युवराज, कुछ न पूछिये, सब कुछ नाश हो गया। देवल के युद्ध में मैं घायल हो गया था, यह तो आपको ज्ञात ही है।

जयशाह—हाँ, ज्ञानबुद्ध की करतूतों से हमारा नाश । तुम्हारी और वत्सराज की अवस्था सुन कर मैं लड़ते लड़ते उस ओर बढ़ा, पर शत्रु की असंख्य सेना के सामने मेरी सब सेना कट गई। मेरा और मुहम्मद कासिम का घोर युद्ध हुआ। मैंने उसका घोड़ा मार डाला था, वह निराश था कि इसी बीच में सहस्रों लोग मेरे ऊपर टूट पड़े। मैं घायल हो गया। शत्रु आगे बढ़ा। अन्त में पिता जी के साथ युद्ध हुआ और उनका जो अन्त हुआ वह तुम्हें ज्ञात ही है, मानू!

मानू—हाँ युवराज, महाराज की मृत्यु के बाद शत्रु ने अलोर पर आक्रमण किया। अलोर में आपकी माता लाड़ी ने शत्रु का सामना किया। और अन्त में वे भी अन्य वीर राजपूत स्त्रियों के साथ जल कर वहीं भस्म हो गईं।

जयशाह—हा, माता जी ने वीर गति प्राप्त की। (मूर्छित हो जाते हैं फिर संज्ञा प्राप्त कर के) हा माता, तुमने आर्य ललनाओं की तरह जीवनोत्सर्ग किया। तुम धन्य हो।

मानू—युवराज, रसिल और मैंने मिल कर शत्रु को निरुण की ओर बढ़ने से रोका। सूर्य भी अपनी सेना

लिये हमारे साथ थी। वाह, सूर्य ने क्या वीरता दिखाई कि शत्रु के छक्के छूट गये। रसिल मारा गया। मैं भी घायल हो गया। पीड़ा के मारे मुझे मूर्छा आ गई। चेत होने पर मैंने देखा कि शत्रु ने निरुण छीन लिया है। ऐसी अवस्था में निस्सहाय होकर मैं आपकी खोज में इधर आया हूँ। सुना है सूर्य देवी पकड़ ली गई है।

जयशाह—सूर्य पकड़ ली गई? उन दुष्टों के हाथ में सूर्य पड़ गई मानू? हा! कृतान्त की काली दाढ़ों में कमल कुचला गया। हाय!

मानू—हाँ युवराज, नगर भर में लूट खसोट हो रही है।

जयशाह—अब मैं अब मैं सेना की सहायता के लिये काश्मीर नरेश के पास जा रहा हूँ। जीवन के अन्त तक शत्रु से युद्ध करूँगा।

मानू—सूर्य और परमाल का क्या होगा युवराज?

जयशाह—भाई, अब मुझे युवराज मत कहो, अब मैं राह का भिखारी, पथच्युत पथिक, कीचड़ का कण हूँ। सूर्य स्वयं विज्ञ है, वह शत्रु के पंजों में सीधी तरह न आयेगी। हाँ, परमाल भोली और दार्शनिक विचारों की भावप्रवण बालिका है किन्तु यह कुछ भी अब सोचने का अवसर नहीं है। मैं भरसक सिन्ध को शत्रुओं से उन्मुक्त करने

की चेष्टा करूँगा। यही मेरे जीवन का ध्येय है।

मानु—मैं आपका भुक्तभोगी अनुचर हूँ, मेरे घाव अभी तक ठीक नहीं हुए, फिर भी मैं आपका साथ न छोड़ूँगा।

√ जयशाह—क्या ही अच्छा होता यदि मैं स्वर्गीय दादा जी की प्रमाद में मीठी लगने वाली भूलों को गुणों में बदलकर हिन्दुओं और बौद्धों की जीवन धारा में एकता का रस बहा सकता। धर्म के समान देश की भावनाओं को बलिदान की एक बहुत ऊंची सीढ़ी बना सकता! आत्मा की अपेक्षा समाज और समाज के सामने देश के जीवन को उन्नत बनाने में सहायक हो सकता! पर नहीं, वह एक खुमारी थी जो स्वप्न बन कर उड़ गई, वह एक राग था जो गूँज कर आकाश के किसी अन्तराल में जा छिपा, वह एक दीपक था जो टिमटिमा कर आँखों से ओझल हो गया। अब   अब क्या होगा? कुछ नहीं । नहीं, नहीं, अब समस्त भारत में घूम कर हम लोग राजाओं से सहायता माँगेंगे, उन्हें शत्रुओं के अत्याचार की रोती हुई कथा सुनायेंगे। हिन्दू और बौद्धों में युद्ध का जीवन फूँक देंगे। न होगा तो शत्रुओं के हाथों मर कर पचत्व करेंगे।

(प्रस्थान)   पटपरिवर्तन

तीसरा दृश्य

सन्ध्या का समय

(हताहत सैनिकों के ढेर में कुछ स्त्रियाँ)

एक सैनिक—हाय ! पानी के लिये जान छटपटा रही है। पानी पानी, हाय !

एक स्त्री—(दूसरी से) देखो बहिन, किस तरफ से आवाज़ आ रही है। कोई सैनिक छटपटा रहा है।

दूसरी स्त्री—(ध्यान से सुनकर) उस ओर से। बेचारा कोई पानी पानी चिल्ला रहा है। (आगे बढ़कर पास जाती है और उसके मुँह में पानी डालती है, पानी पीकर सैनिक आँखें खोल देता है दूसरी ओर से एक और आवाज़ आती है, उसके पास जाकर)

पहली स्त्री—अरे, यह तो अरबी है, मैं अपने देश के शत्रु को पानी न दे सकूँगी। अरे नीच, मैं तुझे पानी कदापि न दूँगी।

अरबी सैनिक—अरी माई, खुदा के नाम पर एक बूँद पानी दे दे।

पहली—इसी बूते पर मेरे देश पर अत्याचार करने

आया था ? तुझे पानी तो क्या (क्रोध में आकर एक लात मारती है, सैनिक चीखता उठता है उसी समय परमाल आती है।)

पर—बहिन, यह कौन है ?

पहली—यह शत्रुपक्ष का आदमी है। मैं इसे पानी नहीं दे सकती। इसके लिये सिन्ध की भूमि में पानी नहीं है।

पर—संसार के सब प्राणी एक हैं बहिन, मरते हुए आदमी को सब संसार एक है। इसे पानी दो।

पहली—नहीं बहिन, शत्रु मित्र की पहचान ही तो देश की स्वतन्त्रता और परतन्त्रता की प्राप्ति का साधन है। आग और पानी की पहचान तो विवेक है।

पर—अब हमारी इसके साथ कोई शत्रुता नहीं है। मृत्यु शत्रुता, मित्रता, उदासीनता के नाटक की यवनिका है। यह भेदभाव और विनाश की जागृति है। इसे भी पानी दो। (स्वयं जाकर उसके मुख में पानी डालती है, वह सैनिक आँखें खोल उन्हें दुआ देता है परमाल उसको ढाढस देकर दूसरे घायलों की परिचर्या के लिए जाती है।)

(कुछ अरब सैनिकों का प्रवेश)

एक—वह स्त्रियाँ इधर ही तो आई हैं।

दूसरा—नहीं, वे यहाँ तो दीखती नहीं। (सैनिकों को देखते हुए आगे बढ़ते हैं, एक घायल अरबी इशारे से उन्हें बुलाता है, और वे लोग पास जाते हैं।)

घायल—किसे ढूँढते हो ?

खोजी—तुझे नहीं ढूँढते रे, बता यहाँ कुछ औरतें आई थीं हम उन्हें पकड़ने आये हैं। (उसके मुँह पर पानी के छींटे देखकर) मालूम होता है तुझे किसी ने पानी पिलाया है। बता, वह पानी पिलानेवाला कौन था ?

घायल—(शक करके) तुम उन खुदा के बन्दों की बाबत क्यों पूछते हो ?

खोजी—(इकट्ठे होकर) हम उन्हें पकड़ने आये हैं। बता वे औरतें किधर चली गई ?

घायल—तो मैं न बताऊँगा। आखिरी दम में उनके पह-सान को नहीं भूल सकता।

खोजी—इसे मालूम है। अरे मूर्ख, तू आखिरी दम अपनी जाति से विद्रोह न कर, बता वे औरतें कहाँ चली गई।

सैनिक—सभी खुदा के बन्दे हैं। (कुछ सोच कर) क्या सचमुच हम एक नहीं हैं, क्या यह लड़ाई ससार की आँखों में अधिक पानी बहाने के लिये नहीं है! मैं भूला, तुम भी भूले! यह कैसी भूल है? शायद दलीलें भी यहीं आकर भूली हैं।

खोजी—इस नालायक काफिर को यहीं कत्ल कर दो। (सब उसे ठोकरों से मारते हैं, वह सब सह कर भी अन्त को मर जाता है। दूसरी ओर से कुछ सिन्धियों का परमाल को पकड़े हुए प्रवेश।)

एक सिन्धी—देखो परमाल को मैंने पकड़ा है, यह बात तुम्हें माननी होगी।

दूसरा—वाह वे, हम क्या यों ही रहे?

तीसरा—बताया तो मैंने ही था।

(परमाल बँधी हुई।)

पर—अरे नीचो, राजकन्या को पकड़ कर शत्रु को सौंपते तुम्हें लज्जा नहीं आती? ओ, क्या यह भी देखना था!

सब—माल मिलेगा माल। सेनापति ने तुम्हें पकड़ने का बड़ा पारितोषिक नियत किया है।

पर—तुम जैसों ने ही सिन्ध को पराधीन बनाया है। मनुष्य जैसे एक बार घातक क्षय का ग्रास बन कर उस से उन्मुक्त नहीं हो सकता, इसी प्रकार देश द्रोह रूपी क्षय से देश नष्ट हुए बिना नहीं रह सकता। तुम लोगों ने सिन्ध को पराधीनता की बेड़ी में डाला है, समझे?

एक सिन्धी—अहा, क्या अब भी राजा का प्रभुत्व स्वीकार करना होगा।

दूसरा—अब महाराज दाहर मर गये, जिन्होंने हम उच्च वर्णस्थ क्षत्रियों की अवज्ञा की, और जाटों को क्षत्रिय बनाया। चलो, अब तुम्हारे भाग्य का निपटारा अश्वपति के हाथों होगा। (ले जाते हैं।)

पटपरिवर्तन

चौथा दृश्य

रात का समय

(सेनापति मुहम्मदबिनक़ासिम अपनी छावनी में बैठा है।)

क़ासिम—ओह, सिन्धी बड़े गजब के लड़ने वाले हैं। मुझे वह बात तो अभी तक नहीं भूलती, जब दाहर ने सिन्ध नदी की दूसरी ओर से तीर मार कर मुझे घायल कर दिया था। वह तो कहो कि उस समय मेरे सामने एक नहीं दो अरबी खड़े थे। उनके बदन को चीर कर वह तीर मेरे आकर लगा। वरना मेरा तो खातमा था। लेकिन खुदा के फ़ज़ल से मैंने सिन्ध को जीत लिया है। बिच्छू का पेट अगर मुलायम न होता और कहीं डक की तरह सारा बदन कड़ा होता तो उसे मारना बड़ा मुश्किल था। ठीक इसी तरह दगाबाज़ और फरेबी लोगों को बिच्छू का पेट बना कर मैंने बड़ी आसानी से सिन्ध रूप बिच्छू के डक को काटा है। ज्ञानबुद्ध मोक्षवासव जैसे आदमियों की मदद से मुझे यह जीत मिली है। (कुछ सोच कर) लेकिन जिन लोगों ने अपने मुल्क के साथ दगा की है, वे हम परदेशी अरबियों के साथ नेकी का सलूक करेंगे, यह नामुमकिन है। मैं उन पर कभी विश्वास नहीं कर सकता।

(कुछ सिपाहियों का प्रवेश)

(कासिम उनकी ओर देखकर) बताओ, परमाल मिली या नहीं ?

सब—(सिर झुका कर चुप हो जाते हैं ।) नहीं, हुजूर ।

कासिम—मैं कुछ नहीं सुनूँगा, मैं परमाल को चाहता हूँ । ज़मीन की तह से उसे ढूँढ कर लाओ ।

एक—हुजूर, बहुत ढूँढा मगर वह न मिली ।

कासिम—नहीं मिली ! कहाँ गई ? जाओ उसे ढूँढो, बस अब एक परमाल ही बाक़ी है, सूर्य तो पकड़ ली गई है । मैं काफ़िर दाहर का सिर, सूरज और परमाल को ख़लीफ़ा के पास भेजना चाहता हूँ ।

(दूसरी तरफ़ से कुछ सिन्धी लोग परमाल को पकड़े हुए दाख़िल होते हैं ।)

एक सिन्धी—हुजूर, परमाल को पकड़ कर लाये हैं ।

कासिम—(ख़ुशी से उछल कर) शाबाश, (परमाल को देखकर उसके रूप सौन्दर्य पर मुग्ध हो जाता है ।) क्या यह राजा दाहर की बेटी परमाल है ?

सब—जी जनाब ।

कासिम—(अपने आदमियों से) इसको क़ैद करो । (बाक़ी लोगों से) तुम लोगों को इसका काफ़ी इनाम मिलेगा ।

एक—हुजूर, इसे पकड़ा तो मैंने है। मुझे अधिक इनाम मिलना चाहिये।

दूसरा—नहीं हुजूर, मैंने बताया था, मुझे ज्यादा इनाम मिलना चाहिये।

कासिम—अच्छा जाओ, तुम सब को काफी इनाम दिया जायगा। (जाते हैं।)

कासिम—एक से एक बढ़कर हैं। गजब की खूबसूरती है। अगर सूरज सूरज है तो परमाल चाँद है। ओ (कुछ सोचकर) सूरज बड़ी तेज़ औरत है, उसकी आँखों से खूँखारी, सख्ती, टपकती है। भला, उसकी लड़ाई क्या भूलने की बात है। अरुण की लड़ाई में उसने मेरे तो होश बिगाड़ दिये। अकेली औरत ने तमाम फौज में तहलका मचा दिया। या खुदा, ये हिन्दू औरतें भी गज़ब की होती हैं। और तो क्या, अभी उसने मुझे कमीना, डाकू कह कर पुकारा था। लेकिन परमाल बड़ी सीधी मालूम होती है। आ! कहीं ये नहीं यह खलीफा का उपहार है। लेकिन यह क्या? मेरे इस सुनसान डेरे में हँसी की आवाज कहाँ से आ रही है? कौन हँस रहा है? (तलवार उठाकर) कौन है? हैं! यह तो दाहर की हँसी है— (घबरा कर) यह क्या चारों तरफ दाहर ही दाहर दिखाई दे रहे हैं। हर एक कोने में दाहर की आवाज़ सुन रहा हूँ।

हवा में दाहर की गंध है । याकूब, याकूब । (कहता हुआ एक ओर गिर पड़ता है ।)

याकूब—(अन्दर आकर) हुजूर हुजूर, हैं यह क्या हुआ ? (सामने देख कर) अरे, सिपहसालार साहब तो बेहोश पड़े हैं ? (उपचार करता है कासिम संज्ञा प्राप्त करता है ।)

कासिम—हैं, तू मुझ से क्या चाहता है !

याकूब—हुजूर, यहाँ तो कोई भी नहीं है । आप क्या कह रहे हैं ?

कासिम—कोई भी नहीं ? क्या कोई भी नहीं था ? नहीं था ! अभी दाहर का सिर हँस रहा था । मैंने देखा, मैंने उसकी हँसी सुनी । ओफ, कैसा भयंकर दृश्य था । क्या अब कुछ भी नहीं !

याकूब—जनाब, कुछ भी तो नहीं था !

कासिम—अच्छा तुम जाओ, मैं सपना देख रहा था ।

(याकूब बाहर जाता है, कासिम बैठा उस दृश्य को सोचता है)

पटाक्षेप

पाँचवाँ दृश्य

प्रात काल का समय

(एक लश्कर के साथ सूर्य और परमाल अरब की यात्रा में। सूर्य क्रोध और प्रतिहिंसा की मूर्ति बनी बैठी है, परमाल अपने ध्यान में मग्न है।)

सूर्य—अग्नि के सहयोग से काष्ठ खण्ड की तरह आज सिन्ध रूप काष्ठ भी विद्रोहाग्नि के कणों से भस्म हो गया। अचानक ही प्रलय की एक धारा आई और एक वेग के साथ उसे बहा ले गई। उत्कट प्रभंजन के एक झोके से स्वतन्त्रता का कमल टूट कर मिट्टी में मिल गया। विद्रोह के स्फुटिलङ्गों में परतन्त्रता का चित्र दिखाई पड़ने लगा। विलास के साधनों में उत्तेजना जिस प्रकार विनाश की ओर अग्रसर होती है, ठीक उसी तरह विभीषणों की विलास कामना में सिन्ध का नाश हो गया, आह!

पर—वायु वेग से प्रताडित नदी की धारा में जिस प्रकार बुलबुले उठते और लीन हो जाते हैं उसी तरह ससार की राज्यसम्पत्तियों का हाल है। उत्पत्ति और नाश इस ससार रूपी पात्र के दो किनारे हैं। विधाता के कालनद में हम सब एक ओर को बहे जा रहे हैं। देखना चाहिये कहाँ पहुँचते हैं?

सूर्य—(खीझ कर) बगदाद के राजा का विनोद करने,

यवन साम्राज्य की समृद्धि करने और कहाँ ? बहन, तुम्हारे इस दार्शनिक ज्ञान की बलिहारी है। इतना सब कुछ होते हुए भी तुम्हें कल्पना का भूत नहीं छोड़ता !

पर—तो क्या हम लोग बगदाद के राजा के पास ले जाई जा रही हैं बहन ?

सूर्य—(उसी मुद्रा से) क्या तुम्हें यह सब पसन्द है ?

पर—(सोच कर) क्या यह भी देखना होगा ? (कान पर हाथ रख कर) बहन, बचाओ ! मुझे कुछ नहीं सूझता ! (उद्विग्न हो कर सूर्य देवी की गोद में गिर पड़ती है।)

सूर्य—अरी भावप्रवण बालिके, (प्यार से) क्या करना होगा, यह मैंने निश्चय कर लिया है ! (हँस कर) अब तुम्हें खड्ग की अंकशायिनी बनना होगा इस के लिये तैयार हो न ?

पर—हर तरह तैयार हूँ। हा, मुझ निगोड़ी को वास्तविकता की गोदी से अनहोनी के अंक में सोना होगा, इसका मुझे ज्ञान भी न था ! मैं अरब में जीवन बिताने की अपेक्षा खड्ग की अंकशायिनी होने को सर्वथा प्रस्तुत हूँ बहन !

सूर्य—विकट परिस्थितियाँ भी संसार यात्रा का एक अंग हैं ? धैर्य से देखो क्या होता है। अब हम लोग खलीफा के पास ले जाई जा रही हैं। वहाँ क्या होगा, यह भी देखना

पाँचवाँ दृश्य

प्रात:काल का समय

(एक लश्कर के साथ सूर्य और परमाल अरब की यात्रा में। सूर्य क्रोध और प्रतिहिंसा की मूर्ति बनी बैठी है, परमाल अपने ध्यान में मग्न है।)

सूर्य—अग्नि के सहयोग से काष्ठ खण्ड की तरह आज सिन्ध रूप काष्ठ भी विद्राहाग्नि के कणों से भस्म हो गया। अचानक ही प्रलय की एक धारा आई और एक वेग के साथ उसे बहा ले गई। उत्कट प्रभंजन के एक झोके से स्वतंत्रता का कमल टूट कर मिट्टी में मिल गया। विद्रोह के स्फुटिलङ्गों में परतन्त्रता का चित्र दिखाई पड़ने लगा। विलास के साधनों में उत्तेजना जिस प्रकार विनाश की ओर अग्रसर होती है, ठीक उसी तरह विभीषणों की विलास कामना में सिन्ध का नाश हो गया, आह !

पर—वायु वेग से प्रताडित नदी की धारा में जिस प्रकार बुलबुले उठते और लीन हो जाते हैं उसी तरह ससार की राज्यसम्पत्तियों का हाल है। उत्पत्ति और नाश इस ससार रूपी पात्र के दो किनारे हैं। विधाता के कालनद में हम सब एक ओर को बहे जा रहे हैं। देखना चाहिये कहाँ पहुँचते हैं ?

सूर्य—(खीम कर) बगदाद के राजा का विनोद करने,

यवन साम्राज्य की समृद्धि करने और कहाँ ? बहन, तुम्हारे इस दार्शनिक ज्ञान की बलिहारी है। इतना सब कुछ होते हुए भी तुम्हें कल्पना का भूत नहीं छोड़ता !

पर—तो क्या हम लोग बगदाद के राजा के पास ले जाई जा रही हैं बहन ?

सूर्य—(उसी मुद्रा से) क्या तुम्हें यह सब पसन्द है ?

पर—(सोच कर) क्या यह भी देखना होगा ? (कान पर हाथ रख कर) बहन, बचाओ ! मुझे कुछ नहीं सूझता ! (उद्विग्न हो कर सूर्य देवी की गोद में गिर पड़ती है।)

सूर्य—अरी भावप्रवण बालिके, (प्यार से) क्या करना होगा, यह मैंने निश्चय कर लिया है ! (हँस कर) अब तुम्हें खड्ग की अंकशायिनी बनना होगा इस के लिये तैयार हो न ?

पर—हर तरह तैयार हूँ। हा, मुझ निगोड़ी को वास्तविकता की गोदी से अनहोनी के अंक में सोना होगा, इसका मुझे ज्ञान भी न था ! मैं अरब में जीवन बिताने की अपेक्षा खड्ग की अंकशायिनी होने को सर्वथा प्रस्तुत हूँ बहन !

सूर्य—विकट परिस्थितियाँ भी संसार यात्रा का एक अंग हैं ! धैर्य से देखो क्या होता है। अब हम के पास ले जाई जा रही हैं। वहाँ क्या

पाँचवाँ दृश्य

प्रात काल का समय

(एक लश्कर के साथ सूर्य और परमाल श्ररब की यात्रा में। सूर्य क्रोध और प्रतिहिंसा की मूर्ति बनी बैठी है, परमाल अपने ध्यान में मग्न है।)

सूर्य—अग्नि के सहयोग से काष्ठ खण्ड की तरह आज सिन्ध रूप काष्ठ भी विद्रोहाग्नि के कणों से भस्म हो गया। अचानक ही प्रलय की एक धारा आई और एक वेग के साथ उसे बहा ले गई। उत्कट प्रभजन के एक झोंके से स्वतन्त्रता का कमल टूट कर मिट्टी में मिल गया। विद्रोह के स्फुटिलङ्गों में परतंत्रता का चित्र दिखाई पड़ने लगा। विलास के साधनों में उत्तेजना जिस प्रकार विनाश की ओर अग्रसर होती है, ठीक उसी तरह विभीषणों की विलास कामना में सिन्ध का नाश हो गया, आह!

पर—वायु वेग से प्रताडित नदी की धारा में जिस प्रकार बुलबुले उठते और लीन हो जाते हैं उसी तरह ससार की राज्यसम्पत्तियों का हाल है। उत्पत्ति और नाश इस संसार रूपी पात्र के दो किनारे हैं। विधाता के कालनद में हम सब एक ओर को बहे जा रहे हैं। देखना चाहिये कहाँ पहुँचते है?

सूर्य—(खीझ कर) बगदाद के राजा का विनोद करने,

छठा दृश्य

देश बगदाद—(राजदरबार लगा है)

(खलीफ़ा तख़्त पर बैठा है, सब दरबारी अपने अपने स्थान पर बैठे हैं।)

खलीफ़ा—हैजाज, वे सब उपहार जो वीर कासिम ने भेजे हैं हमारे सामने लाये जाँय।

हैजाज—जो आज्ञा। (सब सामान पेश करता है)

खलीफ़ा—यह क्या है?

हैजाज—हुजूर, यह शत्रु दाहर का सिर है।

खलीफ़ा—ऐसा खौफनाक, इतना बड़ा सिर! ठीक है, यही कारण है कि हम अब तक हारते रहे। ठीक है यह बड़ा बहादुर है। ओह, यही तो हमारे सर्वनाश की जड़ था। इसे उठाकर गाड़ दो।

हैजाज—हुजूर, यह छतरी है जो उसके तख़्त पर लगी थी। और यह और सामान है जो उसी के सिर के साथ भेजा गया है। उसकी लड़कियाँ भी आई हैं।

[illegible] में भेजा जाय। हैजाज, आज

भास्कर क्षीण हो गया। चारों तरफ विनाश है। पर मैं (यवनों की तरफ संकेत करके) कस कर बदला लूँगी। यह सूर्य तुम्हें विजय का पूर्ण आस्वादन कराकर चैन लेगी। विश्वास-घातियों के साथ विश्वासघात, छल कपट से बदला लूँगी! कासिम, तू समझता है विजय तेरी हुई, नहीं विजय मेरी होगी। देख, आर्य्यकन्यायें क्या करती हैं! तू देख और संसार देखे। हे नीच, तूने छल से, प्रलोभन देकर, बहका कर देश के दुष्टों के सहारे विजय प्राप्त की। आज सूर्य उसी का बदला लेगी!

(सोचती हुई ध्यान मग्न हो जाती है)

पटपरिवर्तन

वलीद—(कामोत्तेजित होकर) बड़ी शाहज़ादी, मैं पहले तुम से निकाह करूँगा, उसके बाद इससे।

सूर्य—(क्रोध से दाँत पीस कर और रोनी सूरत बना कर) आः! खलीफा साहब, अब हमारे हृदय नहीं है, प्रेम नहीं है, जीवन नहीं है, जो　　　　। उस नीच, कृतघ्न, पापी मुहम्मदबिनकासिम ने छल से हमारा घर उजाड़ डाला। हाय! खलीफा साहब, हे ईश्वर! क्या तुम नहीं देखते　। हा! नीच तेरा बुरा हो। तूने हमारे साथ धोखा किया। तूने खलीफा के साथ विश्वासघात किया। खलीफा नहीं अब यह नहीं हो सकता। मेरी बहन भी अब　　　। (ज़ोर से रोती है।)

वलीद—(गुस्से में भर कर) हैं! क्या कहा? (कुछ सोच कर) ऐसा, उस कमीने पाज़ी, दोज़खी कुत्ते ने मेरे पास भेजने से पहले पहले तुम्हें खराब कर डाला क्या? (दाँत पीस कर) बोटी बोटी कटवा दूँगा। कमीना कासिम, खलीफा की इतनी बेइज्जती? (उठ खड़ा होता है और महल से बाहर चला जाता है। सूर्य और परमाल रह जाती हैं।)

सूर्य—देखा बहन तूने, इस तरह मैं उससे बदला लूँगी। मौत का बदला मौत है। मैं मुहम्मद की मृत्यु चाहती हूँ। मैं उसे दूसरे के देश पर हमला करने का मज़ा चखाऊँगी।

सातवाँ दृश्य

(बगदाद के महल में सूर्य और परमाल एक तरफ बैठी हैं, सशस्त्र परिचारिकायें चारों तरफ़ से उन्हें घेरे हुए हैं।)

पर—बहन, सुना है खलीफा आ रहा है। हाय! अब क्या होगा?

सूर्य—परमाल, परीक्षा का अवसर है, तुम कुछ मत बोलना। 'शठे शाठ्य समाचरेत्'।

(वलीद का प्रवेश, लड़कियों को देखकर)

वलीद—वाह! बला की खूबसूरती है। हिन्दुस्तान में क्या ऐसी ही औरतें । (सूर्य और परमाल उठकर खड़ी हो जाती हैं।)

सूर्य—जनाब, सलाम।

वलीद—(मन ही मन मुग्ध होकर) बैठो, तसलीम। क्या तुम बता सकती हो तुम में से छोटी कौन है और बड़ी कौन, और तुम दोनों के नाम क्या हैं?

सूर्य—महोदय, मैं ही बड़ी हूँ। मेरा नाम सूर्य देवी है, और यह मेरी छोटी बहन परमाल देवी है।

परमाल—बहन, तैयार हूँ, मैं उसी समय से तैयार हूँ। पैदा होते ही मैंने मरने का नाम सुना। मृत्यु, जीवन की सहचरी, श्वासों की क्रान्ति, उत्थान रूपी मन्दिर की पिछली दीवार है। मैंने उसे फूलों से हँस कर उनका रस चूसते देखा है, पत्तों का आलिंगन करके उन्हें पीला बनाते देखा है, मेघों का सार खींच कर उन्हें निर्जल बनाते देखा है, शरद् के बादलों में जीवन न था, फिर भी उनमें सौन्दर्य था। उस सौन्दर्य का मैंने सैकड़ों बार आलिंगन किया है। जीवन की प्रतिच्छाया में, सरल परिहास में मैंने मृत्यु का नाद, मधुर आलाप सुना है, रोज यही देखती हूँ। बहन, यह क्या कोई भूलने की चीज है? पिता की मृत्यु, सेना की मृत्यु, सामन्तों की मृत्यु, माता की मृत्यु, मृत्यु ही तो मेरा विशाल गृह है। चलो मैं तैयार हूँ।

(दोनों इसी विचार में दूसरी तरफ़ जाती हैं।)

पटपरिवर्तन

पर—बहन, तुमने खलीफा से क्या कहा ? मैं तो कुछ भी न समझी। हाँ, इतना समझी हूँ कि हमें उसकी क्रोधाग्नि में मरना होगा। मैं मरूँगी।

सूर्य—हम मरेंगी, मरना आर्य कन्याओं के लिये कोई बड़ी बात नहीं है। किन्तु शिक्षा देकर, आग लगा कर, घर जला कर।

(जोश में लौट कर वलीद)

वलीद—लड़कियो, तुम नापाक हो। मैं अब तुमसे निकाह नहीं कर सकता। मैंने उस कुत्ते की लाश खाल में भरवा कर मँगाई है। तुम्हारा बदला लेकर ही मुझे चैन होगा। ओह, इस्लाम के मालिक खलीफा की इतनी तौहीन!

(उसी तरह जोश में बकता हुआ चला जाता है)

सूर्य—ओह! प्रतिहिंसा, प्रतिहिंसा, तेरी आग संसार में सब से भयंकर है। पानी इसे नहीं बुझा सकता, अमृत भी इसे ठंडा नहीं कर सकता। आज मेरे हृदय में वही आग लगी है। पहाड़ों से टकरा कर, समुद्र पर तैर कर, पर्वतों की गुफाओं में घुस कर, बिजली से लड़ कर भी यह शान्त न होगी। यह उसी समय शान्त होगी जब अपना भोजन कर लेगी, अपनी बलि लेलेगी। चल और बढ़। आग लग चुकी है। अब मैं उसकी भस्म चाहती हूँ। छटपटाते, चिल्लाते हुए लोगों को देखना चाहती हूँ। और इसी से मेरा भी जन्म है। परमाल, मरने को तैयार हो जाओ।

परमाल—बहन, तैयार हूँ, मैं उसी समय से तैयार हूँ। पैदा होते ही मैंने मरने का नाम सुना। मृत्यु, जीवन की सहचरी, श्वासों की क्रान्ति, उत्थान रूपी मन्दिर की पिछली दीवार है। मैंने उसे फूलों से हँस कर उनका रस चूसते देखा है, पत्तों का आलिंगन करके उन्हें पीला बनाते देखा है, मेघों का सार खींच कर उन्हें निर्जल बनाते देखा है, शरद् के बादलों में जीवन न था, फिर भी उनमें सौन्दर्य था। उस सौन्दर्य का मैंने सैकड़ों बार आलिंगन किया है। जीवन की प्रतिच्छाया में, सरल परिहास में मैंने मृत्यु का नाद, मधुर आलाप सुना है, रोज यही देखती हूँ। बहन, यह क्या कोई भूलने की चीज है? पिता की मृत्यु, सेना की मृत्यु, सामन्तों की मृत्यु, माता की मृत्यु, मृत्यु ही तो मेरा विशाल गृह है। चलो मैं तैयार हूँ।

(दोनों इसी विचार में दूसरी तरफ़ जाती हैं।)

पटपरिवर्तन

पांचवाँ अंक

पहला दृश्य

(जयशाह चित्तौर की ओर जा रहे हैं ।)

जयशाह—सब विफल हुआ । काश्मीर नरेश ने मुझे सूखा टाल दिया । उसने कहा 'दाहर ने धार्शिया अपनी बहन के साथ मेरे विवाह का घोर विरोध किया था, अत मैं तुम्हें कोई सहायता नहीं दे सकता ।' मैं अब निराश, निस्सहाय, नि'संग होकर लौट रहा हूँ । कहाँ जाऊँ, चित्तौर की तरफ चलूँ, देखूँ वहाँ कहीं कुछ सहायता मिल जाय ! पर चलते चलते पैरों में छाले पड़ गये हैं । मेरा घोड़ा पहाड़ी सर्दी के कारण वहीं ढेर हो गया । वहाँ से लौट कर मैंने मानू को छल कपट द्वारा ज्ञानबुद्ध और मोक्षवासव को मारने के लिये भेजा है । ज्ञान, मोक्ष, तुम दोनों अब ज़िन्दा नहीं रह सकते । (थोड़ी देर विश्राम करलूँ । एक वृक्ष के नीचे लेटते ही सो जाते हैं ।)

पटपरिवर्तन

दूसरा दृश्य

(सूर्यदेवी और परमालदेवी महल के बाग में टहल रही हैं ।)

सूर्य—परमाल, अब मैं पागल हो रही हूँ । ओह ! मेरे हृदय की आग बढ़ती जा रही है । इतने दिन हो गये अभी मेरी इच्छा पूर्ण नहीं हुई । कहीं किसी के कहने सुनने से खलीफा ने मेरे शिकार को छोड़ तो नहीं दिया ?

पर—अगर ऐसा हुआ तो हम क्या करेंगी ?

सूर्य—तो मुझे बलि चाहिये । मैं बलि लूँगी । (चिल्लाकर) मैं भेंट चाहती हूँ ।

(खलीफ़ा और हैजाज़ का प्रवेश)

खलीफा—ओह ! (सामने आकर) लो, तुम्हें खराब करने वाले कुत्ते की यह लाश है । (लात मार कर नौकर से) खोल, खोल इसे । (नौकर लाश को चमड़े में से निकालता है)

खलीफा—(नौकर से) इस लाश को तुम लाये हो ?

नौकर—जी बन्दा परवर !

खलीफा—मेरे हुक्म को पढ़ कर इसने क्या कहा ?

नौकर—हुजूर, जैसे ही जनाब के हुक्म को लेकर हम

लोग हिन्दोस्तान पहुँचे तो मालूम हुआ कि सेनापति अपनी फौज को लेकर पूर्व और उत्तर की तरफ बढ़ गये हैं। हमने मुलतान के पास जाकर फौज को पकड़ा और सेनापति को आपका आज्ञापत्र दिया। उन्होंने पढ़ते ही सिर झुका लिया। तमाम लोग सब बातें जानने के लिये बेचैन हो उठे। तब सेनापति ने थोड़ी देर में सब प्रबन्ध करके मुझसे कहा। खाल लाकर मेरा शरीर उसमे भर दो। शायद मैंने कोई भारी गुनाह किया है। इस तरह बिना हिचकिचाहट के सब के देखते देखते उनको उस चमड़े की खाल में भर उसका मुँह सी दिया गया। वही हम आपके पास ला रहे हैं। रास्ते में ही जान निकली है।

खलीफ़ा—ठीक है, यह ऐसे ही दण्ड का अपराधी था।

हैजाज—हुजूर, क्या आपको पूरा विश्वास है कि मुहम्मद ने इन लड़कियों को अपवित्र किया होगा? मुझे तो इस नौकर की कही हुई बातों से मालूम होता है कि सेनापति नेक रहा होगा।

खलीफ़ा—(सूर्य देवी से) क्यों री लड़की, जो तूने कहा वह सच है न?

सूर्य—खलीफा, सच न होने पर भी सच है। मैं जो चाहती थी, वह हो गया। आज मेरी कामनापूर्ण हो गई। पिता का, माता का, देश का बदला चुक गया। छलछिद्र

से इसने मेरे देश को जीता उसी तरह मैंने तुम्हें बहका कर अपना बदला ले लिया।

बलीद—(गुस्से से पैर पटक कर) ओ पाजी औरत, क्या यह झूठ है कि मुहम्मदबिनकासिम ने तुम दोनों को अपने पास रखा और तुम दोनों को 　　।

सूर्य—सिर से पैर तक झूठ। उसकी क्या मजाल जो हमारी तरफ आँख उठा कर भी देखता। खलीफा, याद रख, मैंने वही किया जो एक दुश्मन दूसरे दुश्मन से करता है।

बलीद और हैजाज—इनकी बोटी बोटी काट कर कुत्तों को खिला दो।

सूर्य—तू क्या मारेगा! (एक दूसरी के खंजर भोंक कर मर जाती हैं, मरते हुए)

सूर्य—प्रतिहिंसा पूर्ण हुई। इस वीभत्स काण्ड में, विश्व विजयिनी वैजयन्ती में, स्वर्णाक्षरों में सिन्ध का बदला लिया रहेगा। खलीफा 　देख वह उड़ रहा है। (मर जाती हैं। सब लोग हैरान होकर देखते हैं।)

खलीफा—हा दाहर, तू ने अपनी मौत का बदला ले ही लिया। है! यह क्या मैं अपने चारों तरफ दाहर का कटा हुआ सिर देख रहा हूँ। यह हँस कर मेरी तरफ देख रहा है। न न 　बहुत हुआ। या खुदा 　काफिर, मुझे चारों

तरफ़ से घेरे खड़े हैं। हँस रहे हैं—हँसो 'खूब हँसो'। नहीं, मैं न था। (कहता हुआ मूर्च्छित होकर गिर पड़ता है सब लोग उपचार के लिये दौड़ते हैं।)

ईलाज—ऐसा बुरा नजारा कभी न देखा था। आसमान से तूफ़ान उठ रहा है। शत्रुओं के रुण्ड हँस रहे हैं। (आँखें मूँद लेता है सब लोग स्तब्ध रह जाते हैं।)

पटाक्षेप